मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका – वर्ष ०९, अंक ०१, 'पौष-माघ' वि. सं. २०८१ (जनवरी २०२५ ई.) श्रीकृष्ण सं. ५२५०

पद्मश्री परम पूज्य

श्री बाबा महाराज के

८७ वें (२२ दिसम्बर)

अवतरण दिवस (जन्मोत्सव)

की हार्दिक शुभकामनाएँ

मंगल बधाई

मंगल बधाई

परम पूज्यश्री बाबा महाराजजी का माताजी गौशाला
में ७८ वाँ जन्म-बधाई-उत्सव मनाया गया

अनुक्रमणिका

विषय- सूची		पृष्ठ- संख्या
१	ब्रजरज के आश्रय से ब्रजरस-प्राप्ति	०५
२	'राधा' नाम में विश्वास का परिणाम	०७
३	श्रीसंत-कृपा की पहिचान 'विश्वास की प्राप्ति'	०९
४	'बाबाश्री' का बाल्य-प्रभाव	११
५	श्रीब्रज-संस्कृति के संरक्षक संत	१३
६	बाबाश्री के अनुभव	१६
७	'बाबाश्री' के प्रति 'श्रीराधानाथस्वामी' के भावोद्गार	१९
८	श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी के दर्शन-स्पर्श का प्रभाव	२२
९	विरक्त शिरोमणि 'श्रीरघुजीमहाराज'	२४
१०	भारत माँ का गौरव 'गौमाता'	३०

।। राधे किशोरी दया करो ।।

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो ।
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो ।
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो ।
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो ।
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो ।
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो ।

INSTAAL करें --- PLAY STORE से-----

MAANINI APP

बाबाश्री के सत्संग/कीर्तन/भजन, साहित्य, आदि यहाँ से FREE -DOWNLOAD कर सकते हैं व सुन सकते हैं ।

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले ।"

* योजना *

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकालें व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवाद्रव्य किसी विश्वसनीय गौसेवा प्रकल्प को दान कर गौरक्षा कार्य में सहभागी बन अनन्त पुण्य का लाभ लें । हिन्दूशास्त्रों में अंशमात्र गौसेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है ।

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८.०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ८:०० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं ।

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल , प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर , गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

mob. राधाकांत शास्त्री .....9927338666, Website :www.maanmandir.org , (E-mail :info@maanmandir.org)

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें । हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है – **सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ । जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ।।** (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं हो सकता ।

प्रकाशकीय

एकमात्र पढ़कर 'सत्संग' का रस प्राप्त होना सम्भव नहीं हैं, अतएव इस दिव्य रस को प्राप्त करने के लिये संत-महापुरुषों की जीवनी को जानना तथा उनमें श्रद्धा-समर्पण होना अत्यावश्यक है । हमारी जितने अंश में शरणागति सच्चे संत में होती है, उतनी ही श्रीइष्टदेव में होती है –

'यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।' (श्वेताश्वतरोपनिषद् ६/२३)

श्रीभगवद्भक्ति की पहिचान श्रीभागवत-भक्ति (श्रीसंत-प्रणिपात) से ही होती है । इसके लिए संतजनों के जीवन-वृत्त के माध्यम से उनके अंतःकरण के भावों को समझना बहुत जरूरी है, तभी संत-वाणी के श्रवण-पठन का सम्यक् लाभ होता है । 'सत्संग' द्वारा अपने जीवन के बचे हुए वर्षों का सदुपयोग भगवत्प्राप्ति में कर सकते हैं । 'सत्संग' का आत्मसात् होना व विवेक 'विशुद्ध बोध' उत्पन्न होना बिना भगवान् की कृपा के सम्भव नहीं है ।

बिनु सतसंग बिबेक न होई । राम कृपा बिनु सुलभ न सोई ॥ (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – ३)

अनन्त जन्मों के संचित पाप सत्संग सुनने में बाधा पहुँचाते हैं, परन्तु महापुरुषों की वाणी का एक शब्द ही अनन्त पापों को काटने में समर्थ है, बस जरूरत है श्रद्धा एवं निष्ठा की । क्या जाने 'बाबाश्री की रहनी या उनके द्वारा कही हुई कोई पंक्ति' आपके जीवन की धारा ही बदल दे !!! अन्यथा जीवन पर्यन्त मात्र घंटी हिलाने एवं मिथ्या साधन या साधन के अहंकार में (मैंने इतना जप किया या इतना पाठ किया) प्राणी की विचारधारा में लेशमात्र भी परिवर्तन नहीं होता और मनुष्य में काम, क्रोध एवं लोभ का प्रकोप निरन्तर बना रहता है । बाबाश्री के शब्दों में – "कोई पंडित बनता है, कोई ज्ञानी बनता है, किसी ने जीवन में बहुत बड़ा नाम कमा लिया है परन्तु जा कहाँ रहा है – अनन्त अन्धकार की ओर ।" प्राणी 'भक्तिमार्ग' पर चलते हुए यह अभिमान कर बैठता है कि हम साधु हैं अथवा विरक्त हैं या अज्ञानवश 'सेवा' को क्रिया समझ कर एक कोल्हू के बैल की तरह जीवन पर्यन्त लगा ही रहता है । संत-महापुरुष यह ज्ञान कराते हैं कि 'सेवा' कोई क्रिया नहीं वरन् भाव है तथा साधकजनों को भावसिद्धि के मार्ग पर अग्रसर करते हैं । तिलक धारण कर, कंठी पहनने से, कर्णमन्त्र प्राप्त करने से, वेष बदलने पर भी यदि भाव में परिवर्तन नहीं हुआ तथा काम, क्रोध, लोभादि अनर्थों का नाश नहीं हुआ तो हम मात्र 'वेष के साधु' हुए और इस कलियुग में यह अधिकतर दिखाई दे रहा है ।

हिमालय की कंदराओं या जंगलों में संत-महापुरुषों को खोजने की आवश्यकता नहीं है; बस जरूरत है तो सिर्फ इस भक्तिमय ज्ञान को प्राप्त करने की, जो श्रीबाबामहाराज जैसे संत-महात्माओं के सत्संग से सुलभतापूर्वक उपलब्ध होता है । जरा-सा प्रयास करके तो देखिये, और जब आप कुछ समय बाद अपने अतीत में झाँकेंगे तब यह अनुभव होगा – "अरे ! मेरा जीवन किस अन्धकार की ओर जा रहा था ?" सच्चे संतों की जीवन-शैली व उनके द्वारा किए गए उपदेश से सहज ही अनादिकाल से मायिक अन्धकार में भटक रहे जीवों को उस दिव्य प्रकाश की प्राप्ति हो जाती है, जो बड़े-बड़े दीर्घकालीन कठिन साधनों से कभी नहीं हो सकती है । इसलिये प्रस्तुत पत्रिका के माध्यम से यही सतत् संप्रयास है कि हम सभी लोगों को अति शीघ्र विशुद्ध भक्तिमय प्रकाश की प्राप्ति हो, जिससे 'सेवा-आराधन' में सतत् संलग्न रहें ।

कार्यकारी अध्यक्ष

राधाकान्त शास्त्री

श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान

ब्रजरज के आश्रय से ब्रजरस-प्राप्ति

बाबाश्री के सत्संग 'श्रीराधासुधानिधि' (८/१२/१९९९) से संकलित

निकुञ्ज में सखी भाव वालों का ही प्रवेश है । सूरदासजी आदि अष्टछाप के महापुरुष अष्ट सखाओं के अवतार हैं । इसके साथ ही वे चम्पकलता आदि सखियों के अवतार भी निकुंज में माने गये हैं । एक साथ दोनों बातें हैं क्योंकि रासरस में बिना सखी भाव के और बिना श्रीराधारानी की कृपा के प्रवेश नहीं है । सखाओं के भी चार भेद होते हैं । सखा, नर्म सखा, प्रिय सखा और सुहृद । इनमें जिन सखाओं का श्रृंगाररस में प्रवेश होता है, वे प्रिय, नर्म सखा आदि बोले जाते हैं, इनका श्रृंगार रस में भी अधिकार रहता है, सभी सखाओं का नहीं रहता है । 'राधाकरावचित' – जिनके द्वारा अवचित – चयन की गयी सखियाँ ही रास में प्रवेश करती हैं । उसके बिना प्रवेश सम्भव नहीं है चाहे वे महादेव जैसे हों अथवा कोई भी हों । रास में उन्हीं का प्रवेश होता है, जो श्रीजी की कृपा प्राप्त कर चुके हैं । इसीलिए राधाकरावचित के दो भाव महात्माओं ने लिखे हैं । इसी बात को स्पष्ट करने के लिए एक बार जीव गोस्वामीजी ने पत्र लिखा था । यह बड़ी प्रसिद्ध कथा है । गदाधर भट्टजी बहुत बड़े रसिक भक्त हुए हैं, जिनकी कथा भक्तमाल में विस्तार से वर्णित है । वे गदाधरजी गोपी भाव को प्राप्त हो चुके थे । गोपी भाव प्राप्त होने पर भी युगल रस दुर्लभ है । वह तो एकमात्र वृषभानुनन्दिनी की दया से ही मिलता है । गदाधर भट्टजी को कृष्ण लीला की अनुभूति होती थी । उनका कान्त भाव था कि श्रीकृष्ण मेरे प्यारे हैं, प्रेमास्पद हैं । इस रूप से कृष्ण का मिलना कान्त भाव है । कान्त भाव के प्राप्त होने के बाद भी युगल रस, सहचरी भाव दुर्लभ है । वह नहीं मिलता है । वह एकमात्र श्रीजी की दया से मिलता है । गदाधर भट्टजी को लीला की अनुभूति होती थी । वे कृष्ण रंग में, श्यामसुन्दर के प्रेम में डूबे रहते थे । उनका एक प्रसिद्ध पद है – **'सखी हौं श्याम रंग रंगी ।'** इस पद को किसी सन्त ने वृन्दावन में जीव गोस्वामीजी के सामने गाया । उनका यह पद बड़ा ही दिव्य है, अनुभवों से भरा हुआ है । इस पद को सुनते ही जीव गोस्वामीजी आश्चर्यचकित हो गये और समझ गये कि जिसका यह पद है वह है तो कोई श्रीकृष्ण कृपा प्राप्त पुरुष परन्तु उसको अभी कृष्ण अमृत सिन्धु की एक बूँद ही प्राप्त हुई है । अभी इसको समुद्र नहीं मिला है । जब महापुरुषों की दया हो जाती है, महापुरुष माने इस रस में डूबे हुए रसिक, ऐसे रसिक भक्तों का संग मिलने पर ही इस रस की प्राप्ति होती है, वैसे तो नहीं होती है । इसीलिए महावाणी में कहा गया है – **'पहले रसिक जनन को सेवे ।'** पहली चीज यह है कि उन रसिक भक्तों का संग करो, जो इस रस में डूबे हुए हैं, अन्यथा यह रस मिल ही नहीं सकता है । गदाधरभट्टजी का पद सुनकर जीवगोस्वामीजी ने सोचा कि इन्हें कृष्णप्राप्ति भी हुई है क्योंकि अनुभव से युक्त पद था परन्तु अभी रस की सिन्धु श्रीवृषभानुनन्दिनी की कृपा इनको नहीं मिली है । देखो, इसको कृपा कहते हैं कि गदाधरभट्टजी से जीवगोस्वामीजी की कोई जान-पहचान नहीं और फिर भी उन्होंने एक पत्र में श्लोक लिखकर गदाधरभट्टजी के पास भेज दिया । कृपा इसी को कहते हैं । गदाधरभट्टजी कभी जीवगोस्वामीजी के पास आये नहीं, कभी उन्हें प्रणाम नहीं किया, फिर भी उन पर महापुरुष की कृपा हो गयी । इससे पता चलता है कि महापुरुषों की कृपा बड़ी विलक्षण होती है । जीव गोस्वामीजी ने एक पत्र के माध्यम से गदाधर भट्टजी के पास श्रीजी की कृपा को पहुँचा दिया । सन्तों में ऐसा चमत्कार होता है । जो कृपा बड़ी दुर्लभ है, श्रीकृष्ण-प्राप्ति से भी अधिक दुर्लभ है, यह जो रस है, उसको जीव गोस्वामीजी ने एक श्लोक के माध्यम से गदाधरजी को लिख दिया । गदाधरजी का यह प्रसिद्ध पद है – **सखी हौं श्यामहि रंग रंगी ।** श्रीकृष्ण जिसको मिल चुके हैं, ऐसी कोई कृष्ण रंग में रंगी गोपी श्रीकृष्ण रूपी अमृत को पाने के बाद कहती है – 'अरी ! वह साँवरा, रंगीला-रसीला-छबीला मुझे अपने रंग में रंग गया ।' सखी ने उस गोपी से पूछा कि तू उसके रंग में कैसे रंग गयी तो वह गोपी कहती है कि एक दिन मैं जा रही थी और वह एक कुञ्ज की गली में अपनी त्रिभंगी गति से खड़ा था । मैंने जबसे उस मोहिनी मूरत साँवरी सूरत को देखा, उसी दिन से वह कृष्ण रंग ऐसा चढ़ गया कि अब मुझ पर कोई दूसरा रंग नहीं चढ़ता है । एक कहावत है कि काले रंग पर दूसरा रंग नहीं चढ़ता है ।

या अनुरागी चित्त की गति न समझे कोय । ज्यों-ज्यों भीजे श्याम रंग त्यों-त्यों उज्जवल होय ॥

गोपी कहती है कि मैंने उसे ब्रज की कुंजों में देखा । 'सखी हौं श्यामहि रंग रंगी ।' 'देखि बिकाय गयी वह मूरति', उस मूर्ति को देखने के बाद – 'सूरति रंग पगी ।' उस रूप को देखने के बाद साँवरा रंग चढ़ गया । उसको देखने के बाद सबकी यही हालत होती है । रसिकों ने लिखा है – **जब ते निरखे मनमोहन जू, अँखियाँ तब सो री लगी री लगी ।**

कुल कानि गयी सखी वाही घरी, जब मोहन प्रेम पगी री पगी ॥

कृष्ण से प्रेम करने वाला सब भूल जाता है कि मैं किस कुल में पैदा हुआ, किस गाँव का रहने वाला हूँ, कौन मेरे माता-पिता, कहाँ मेरी ससुराल, कहाँ पीहर ? जब सब भूल जाए तो समझो कि कृष्ण रंग चढ़ गया । **'सुन आली री नेह के नेजन की'** प्रेम एक दुधारी छुरी है, जिसे नेजा कहते हैं । नेजा एक दुधारी तलवार है, जो दोनों तरफ वार करती है । प्रेम एक ऐसी दुधारी छुरी है जो संयोग और वियोग दोनों ही समय में वार करती है । गोपी कहती है कि कृष्ण प्रेम की दुधारी तलवार ने मुझे मार डाला है । **'सुन आली री नेह के नेजन की, उर में अनियानी खगी री खगी ॥'** प्रेम की तलवार हृदय में चुभ गयी है । **'तुम गाव रे नाव रे कोई धरो'**, चाहे बदनामी करो, कुछ भी करो, **'हौं तो साँवरे रंग रंगी री रंगी ॥'**

इसीलिए गोपी ने कहा – **'सखी हौं श्यामहि रंग रंगी । देखि बिकाय गयी वह मूरति, सूरत माहिं पगी । कृष्ण प्रेम रस रंग रंगी मैं, सोय रही रस खोय सखी री ।'** सोते समय भी वह दिखाई पड़ता है । जागती हूँ, आँख खोलती हूँ तो हर जगह वही दिखाई पड़ता है । **'जागेहु आगे दृष्टि पड़े री, नेक न न्यारो होय सखी री ।'** एक क्षण के लिए भी वह अलग नहीं होता है । मैंने सुना कि कन्हैया गाय चराते हैं लेकिन वे कौन से कन्हैया हैं ? एक कन्हैया तो मेरी आँखों में रहता है । यह दूसरा कन्हैया कौन है ? **'एक जु मेरी अँखियन में सखि, रम्यो कियो सखि भौन ।'** वह मेरी आँखों में भवन बसाकर रहता है और ऐसा सुनती हूँ कि एक वही गाय चराने जाता है । 'गाय चरावन जात सुन्यौ सखि, सों धौं कन्हैया कौन सखि री ।' वह कौन है, जो गाय चराने जाता है । कृष्ण तो मेरी आँखों में रहता है । कैसी प्रीति है, कैसा प्रेम है ? कैसा अनुभव है ? 'कासों कहौं कौन पतियावे' किससे कहूँ मैं, कौन विश्वास करेगा ? कहेगा कि यह बकती है ।

'कौन करे बकवाद सखी री । कैसे कै कहि जाय गदाधर, गूँगो को गुड़ स्वाद सखी री ।

यह गदाधर भट्टजी का पद है, उनका अनुभव है । इस पद को जीव गोस्वामीजी ने सुना तो उन्होंने तुरन्त कृपा किया और एक पत्र में श्लोक लिखा । यह श्लोक बहुत प्रसिद्ध है । एक श्लोक में ही जीव गोस्वामीजी ने गदाधरजी को श्रीजी की कृपा प्रदान कर दी । महापुरुषों में कितनी शक्ति होती है ।

अनाराध्य राधापदाम्भोजरेणुमनाश्रित्य वृन्दाटवीं तत्पदाङ्काम् ।
असम्भाष्य तद्भावगम्भीर चित्तान्, कुतः श्यामसिन्धो रसस्यावगाहः ॥

जैसे गंगा, यमुना और सरस्वती मिलकर त्रिवेणी बनती है अथवा किसी स्त्री की चोटी गूँथने के लिए तीन लड़ चाहिए, उसी प्रकार इस रस को पाने के लिए तीन चीजें चाहिए । जीवगोस्वामीजी ने लिखा कि पहली चीज है कि राधारानी की चरणकमल की रेणु (धूल) की आराधना । श्रीकृष्ण की आराधना प्रकट करने के लिए राधारानी का गान हुआ । पूर्णतम पुरुषोत्तम परब्रह्म की आराधना प्रकट करने के लिए श्रीराधारानी का गुणगान हुआ । उस परब्रह्म की अनेक इच्छायें होती हैं, जैसे उसकी युद्ध करने की इच्छा हुई तो वैकुण्ठ में जय-विजय को शाप दिलवा दिया । उस परब्रह्म को तपस्या करने की इच्छा हुई तो नर-नारायण बन गये । उपदेश करने की इच्छा हुई तो कपिल बन गये । जैसी-जैसी उसकी इच्छा होती गयी, वैसा रूप धारण कर लिया । इसी प्रकार जब उस परब्रह्म को आराधना करने की, भजन करने की इच्छा हुई तो श्रीराधा बन गये । इसलिए लोक और वेद में राधारानी का यशगान हुआ, जहाँ श्रीकृष्ण अपने जिस रूप की प्रेमपूर्वक आराधना करते हैं, वह हैं 'श्रीराधा' ।

अध्यक्ष -

रामजीलालशास्त्री, श्रीमानमन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

'राधा' नाम में विश्वास का परिणाम

(बाबाश्रीजी की कृपा)

'राधा' नाम 'चेतोदर्पणमार्जनम्' है, वह चित्त के दर्पण का तुरन्त मार्जन कर देता है । उसके प्रभाव से सत्संग ज्यादा अच्छे ढंग से समझ में आएगा, अच्छी तरह से दिमाग में बैठेगा, संस्कार बन जाएगा । सतत् हमारे जीवन का भाव बन जाएगा । इसलिए नाम आवश्यक है । 'चेतोदर्पणमार्जनम्' जैसे किसी पतीले में दूध जल गया, चिपक गया, उस पतीले को साधारण ढंग से साफ़ करो तो कभी साफ़ नहीं होगा । उसको लोहे के जूने से रगड़ो और थोड़ा पानी में डुबाओ, फिर देखो कि कैसे सारा पतीला अच्छी तरह से साफ़ हो जाता है । इसी प्रकार ये 'श्रीनाम महाराज' हैं, चित्त रूपी दर्पण को रगड़-रगड़कर अच्छी तरह से साफ़ कर देते हैं, फिर उसमें सब कुछ दिखाई देने लग जाएगा । राधा नाम मुख से निकलता रहे, राधा नाम का कीर्तन करे, श्रीबाबा का सत्संग मन के कानों से सुने, शरीर के कान की बात नहीं है । तीन दिन ऐसा करके देख ले । अगर कोई तीस साल से सत्संग कर रहा है, पचास साल से है या दुनिया के किसी भी कोने में है, तीन दिन में ही वह भगवत्प्राप्त महापुरुष की स्थिति को पहचानने-समझने लगेगा क्योंकि स्वयं उसके जीवन में कुछ झलक आ चुकी होगी । इतने सालों से हम लोग यहाँ पड़े हैं किन्तु यह प्रमाण है कि श्रीबाबा के सत्संग के साथ कभी हमारे मन के कानों का सम्पर्क नहीं हुआ । दिमाग अलग चल रहा होता है, सुन कुछ और रहे होते हैं । श्रीबाबा का वही सत्संग, जो मैंने कभी बहुत साल पहले सुना था लेकिन जब आज उसको सुनता हूँ तो ऐसा लगता है कि जैसे पहली बार सुन रहा हूँ । पहले उसका प्रभाव इतना इसलिए नहीं पड़ा क्योंकि चित्त के दर्पण पर बड़े-बड़े धूल के परत जमे हुए थे और राधा नाम लिया जाए तो वह बड़े से बड़े अपराधी के अपराधों का भी शमन कर देता है । **'अनुल्लिख्यानन्तानपि.....।'** (श्रीराधासुधानिधि - १५४) 'राधा' नाम के साथ सत्संग सुना जाए, फिर देखो उसका क्या कमाल होता है । जिस समय आप नाम ले रहे हो, उस समय यदि आपका मन नाम-महिमा में है या सत्संग में है या उनकी लीला में है तो वह नाम, नामाभास नहीं रहता, शुद्ध नाम की कोटि में आ जाता है । शुद्ध नाम के जितने भी प्रभाव हैं, वे सारे के सारे (भावों की गहराई के अनुसार) उसके ऊपर आ जाते हैं । इसलिए यह कोई बहुत लम्बा-चौड़ा रास्ता तो है ही नहीं । जो कुछ भी करो, मन से करो । आपने यदि मन के कानों से सत्संग सुनना शुरू किया, मन से सोचना शुरू किया और राधा नाम बोलना शुरू किया, केवल इतना ही करना आरम्भ किया तो आपको थोड़ी ही देर में सब समझ में आने लगेगा कि ये रास्ता कितना जबरदस्त है । होता क्या है, हम सोचते हैं कि अच्छा चलो करके देखते हैं, तब तक कोई दूसरी बात याद आ जाती है या कुछ और कार्य में मन व्यस्त हो जाता है इत्यादि कुछ न कुछ के चक्कर में कुछ हो ही नहीं पाता है । और इस तरह सालों निकल जाते हैं । भक्ति शास्त्रों में ऐसा लिखा भी है कि किसी ने जीवन भर भगवान् का नाम लिया, ध्यान किया लेकिन अन्तिम समय आया तो शरीर में शक्ति नहीं रही, गले में कफ अटक गया, बेचारा बोल भी नहीं पा रहा है, भगवान् कहते हैं कि उस समय उसके बदले मैं उसके लिए भजन करता हूँ, फिर मैं उसको अपने साथ ले जाता हूँ । यदि कोई राधा नाम ले तो इतने लम्बे चौड़े चक्कर की जरूरत ही नहीं है । श्रीसूरदासजी का एक पद है, उसमें वे कहते हैं कि हे प्रभु ! तुम मेरे साथ क्या करोगे ? मेरे तो बहुत अधिक अपराध हैं । लेकिन <u>यदि 'राधा' नाम लिया जाए तो प्रभु क्या करेंगे, वे तो पीछे-पीछे डोलेंगे, बात खत्म हो गयी ।</u> इतना लम्बा चौड़ा कुछ करने से अच्छा है कि सीधे-सीधे **'राधा'** नाम लो । **'रा'** कहने पर कृष्ण पीछे-पीछे दौड़ने लगेंगे । **'हम हैं राधे जू के बल अभिमानी । टेढ़े रहत मोहन रसिया सों, बोलत अटपटी बानी ॥'** <u>**विश्वास होना चाहिए**</u> । यमराज की हिम्मत नहीं है कि **'राधा'** नाम लेने वाले का कुछ कर सके । 'राधा' नाम कोई भी बोले, ऐसा नहीं कि श्रीबाबा महाराज जैसे विशुद्ध सन्त 'राधा' नाम लेंगे तभी पूर्ण फल मिलेगा; अरे ! गधा, कुत्ता अथवा मेरे जैसा अपराधी भी 'राधा' नाम ले, तब भी पूरा कल्याण होगा, शत-प्रतिशत कल्याण

होगा । ठाकुरजी 'राधा' नाम से प्रेम करते हैं, न कि जीव से । सारी महिमा इसी की है कि उनको 'राधा' नाम से इतना प्यार है । कोई कितना बड़ा अपराधी भी 'राधा' नाम बोल देगा तो भी ठाकुरजी को 'राधा' नाम से इतना अगाध प्रेम है कि उसके आगे फिर उनको सब कुछ दिखाई देना, सुनायी पड़ना बन्द हो जाता है । वे तो अपनी प्रियतमा के नाम से इतना प्रेम करते हैं कि एक बार भी जो 'राधा' नाम लेता है तो वे सोचते हैं कि इसको मैं क्या वस्तु दे डालूँ, जिसने मुझे राधा नाम सुना दिया । 'राधा' नाम सुनने के लोभ से वे पीछे-पीछे भागने लगते हैं । जैसे - रास में करोड़ों गोपियों के साथ करोड़ों श्रीकृष्ण प्रकट हो जाते हैं, उसी प्रकार जो भी 'राधा' नाम लेता है, उसके साथ भी कृष्ण प्रकट हो जाते हैं, विश्वास करना चाहिए । इसलिए 'राधा' नाम लेने वाले के लिए समस्त अपराधों की चर्चा भी व्यर्थ हो जाती है । केवल 'राधा' नाम लो, अपराधों की चर्चा करने और सुनने में क्यों समय को नष्ट किया जाए ? यह बहुत बड़ी कृपा की बात है, जब 'राधा' नाम के प्रति विश्वास उत्पन्न होता है । **'राधा' नाम में नामापराध नहीं होता है** । उसका प्रमाण है सुधानिधि का यह श्लोक –

अनुल्लिख्यानन्तानपि सदपराधान् मधुपतिर्- महाप्रेमाविष्टस्तव परमदेयं विमृशति ।
तवैकं श्रीराधे गृणत इस नामामृतरसं महिम्नः कः सीमां स्पृशति तव दास्यैकमनसाम् ॥ (श्रीराधासुधानिधि - १५४)

विशाखा सखी के अवतार हरिराम व्यासजी तो डंके की चोट पर 'राधा' नाम की महिमा गाते हैं, आओ, और जितना चाहो 'राधा' नाम लूट लो । **'परम धन राधा नाम आधार ।'** और अन्त में कहते हैं – **'व्यास दास अब प्रगट बखानत डारि भार में भार ॥'** सबको यदि राधा नाम की महिमा पता चल जाएगी तो बड़ा गड़बड़ हो सकता है कि राधा नाम में कोई अपराध तो होता नहीं है और जो राधा नाम लेगा, उसके सारे पाप-अपराध तत्क्षण नष्ट हो जायेंगे । किसी व्यक्ति ने ऐसा प्रश्न कर भी दिया था कि ये तो बढ़िया है, कुछ भी पाप करो और राधा नाम ले लो । इस प्रश्न का उत्तर यह है कि जिसको इतना विश्वास हो गया है कि एक राधा नाम लेने से बड़े से बड़ा कुकर्म या अपराध नष्ट हो जाएगा, जिसकी राधा नाम में इतनी श्रद्धा और विश्वास हो जायेगा, वह गलत काम कर ही कैसे सकता है ? जो इस तरह का प्रश्न करता है कि पाप खूब कर लो और फिर राधा नाम ले लो, इससे पता पड़ता है कि उस व्यक्ति के मन में राधा नाम के प्रति कोई श्रद्धा-विश्वास है ही नहीं । वह तो जैसे वकील वकालत करता है और ढूँढता है ये धारा, वो धारा, इसी प्रकार वह व्यक्ति भी केवल उसी में अटका हुआ है कि अपना लाभ कैसे हो ? राधा नाम महिमा में श्रद्धा-विश्वास एक बहुत गम्भीर बात है । हमें उतना ही विश्वास चाहिए जितना हम एक कार या बस के ड्राईवर को देते हैं । यात्रा करने से पहले हम कभी भी कार या बस-ड्राईवर से नहीं पूछते की उसने शराब तो नहीं पी रखी कि नशे में गाड़ी चलाए, घर से लड़कर तो नहीं आया कि क्रोध में गाड़ी चलाए । बस जाकर बैठ जाते हैं इस विश्वास के साथ कि गन्तव्य स्थान तक सुरक्षित पहुँच जायेंगे जबकि हम ड्राईवर को जानते तक नहीं और उसे पूरे विश्वास के साथ अपना जीवन दे डालते हैं बिना दुर्घटनाओं के विचार किए । जितना विश्वास हमने उस ड्राईवर को दिया बस उतना ही विश्वास राधा नाम की महिमा को दे दो । फिर देखो चमत्कार। राधारानी की कृपा-करुणा-दया-प्रेम की बरसात अनुभव होने लगेगी -जितने अंश में विश्वास देंगे, उतने ही अंश में अनुभव होने लगेगा ..... । **यह विश्वास हम सबके पास है;** यह भी कहा जाता है कि यह तो ऋषि-मुनियों की बातें हैं, ऊँची बातें है, यह तो मेरे ऊपर से निकल गयी ..... कुछ नहीं, ये सब बेकार की बात है । इन सबको केवल हौआ बना लिया है और इसी कारण वहाँ पहुँच नहीं पाते । पचासों साल बीत जाते हैं, मनुष्य वहीं घूमता रहता है । इसी कारण से आज भी उसको नाम में रस नहीं आ रहा है, नाम के चमत्कार समझ में नहीं आ रहे हैं । नाम की महिमा तो ऐसी है कि अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों के ईश्वर को बाँधकर हमारे पास रख सकती है । नाम की अनन्त महिमा है, केवल उसके प्रति विश्वास चाहिए । अपना सहज विश्वास भी नाम को नहीं दे पा रहे हैं । अपने ज्ञान का अधिक अभिमान हो गया है, ज्यादा ही पढ़-लिख गये हैं । इसीलिए ज्यादा पढ़ना सबसे अधिक खतरनाक चीज है । धन्ना जाट ने एक पत्थर पर विश्वास कर लिया तो भगवान् उसके लिए पत्थर में से प्रकट हो गये । एक सन्त ने उसे गोल पत्थर देकर यही तो कहा था कि ये

भगवान् हैं, इनको रोज भोग लगाया करो । वह पत्थर को रोटी का भोग तीन दिन तक लगाता रहा और अन्त में उसके सामने भगवान् प्रकट हो गये । धन्ना को पत्थर पर विश्वास हो गया था कि हाँ, ये ही भगवान् हैं । आजकल के लोगों को यह उदाहरण दो तो कहेंगे कि अरे वे तो बहुत बड़े महापुरुष थे । उनका विश्वास तो बहुत उच्च कोटि का था, ऐसा हम कैसे कर सकते हैं ?..... इस तरह की बातें छोड़ देनी चाहिए । सहज रूप से जो ग्रन्थों में लिखा है, संत-महापुरुषों ने जो कह दिया है, उसको सहज हृदय से मान लेना चाहिए । बुद्धि से कहना चाहिए कि बुद्धिरामजी, आपसे हम बाद में बात करेंगे । जनम भर मैंने आपकी सुनी है । अब मुझे शास्त्र व संत-महापुरुषों के अनुसार चलने दो ।

ऐसा विश्वास प्राप्त करने के लिए जिसको विश्वास हो, उसका संग करना चाहिए । बाबा महाराज तो दिन-रात विश्वास करके दिखा रहे हैं, इतनी बड़ी व्यवस्था विश्वास के ही आधार पर चल रही हैं । यह कितनी बड़ी बात है । यहाँ इतनी बड़ी व्यवस्था चल रही है, न कोई फैक्ट्री चला रहा है, न कोई धन/चन्दा माँगने जा रहा है, न कोई नौकरी कर रहा है । ये सब व्यवस्था कैसे हो जाती है ? यह केवल श्रीबाबामहाराज का विश्वास है । बस विश्वास चाहिए । विश्वास से इष्ट के साथ सम्बन्ध का अनुभव होने लगेगा ।

'राधा नाम उच्च स्वर (जोर-जोर) से लेना, राधा नाम का संकीर्तन-आराधना करना' यह सबसे सरल व सरस श्रीभक्तिमार्ग का रास्ता है, इस पर चलने से अति शीघ्र ही श्रीइष्ट की प्राप्ति हो जाती है ।

श्रीसंत-कृपा की पहिचान 'विश्वास की प्राप्ति'

बाबाश्रीजी की कृपा

छोटी-छोटी बात पर विश्वास करने की आवश्यकता होती है । राधासुधानिधि के 'श्लोक – १५४' में राधा नाम की महिमा के बारे में कहा गया है – **'अनुल्लिख्यानन्तानपि.....'** जिसके अनन्त महदापराध कभी लिखे ही नहीं जा सकते थे, इतने बड़े अपराधी द्वारा धोखे से भी एक बार 'राधा' नाम उच्चारण करने मात्र से ही सभी अपराध नष्ट हो गये .....राधा ! .....। हमारी तो वृत्ति में ही है अपराध, केवल 'राधा-राधा' कहते रहेंगे, बस ख़तम बात । यह विश्वास कौन देगा ? बिना गुरु-कृपा के तो ऐसा सम्भव नहीं है । <u>महापुरुष जिस पर अपना प्रेम ढारते हैं - उसको विश्वास दे देते हैं ।</u>

यह श्रीजी की बड़ी कृपा होगी कि कोई अच्छा काम आपसे हो और आपको उसका अहंकार न हो, नहीं तो अक्सर ऐसा होता है कि कोई भी अच्छा काम करने पर बड़ी जल्दी उसका अहंकार हो जाता है । इसका कारण यह है कि अभी हम लोग देहातीत नहीं हुए हैं । देहाध्यास होने के कारण कर्तापन का अभिमान हो जाता है और जीव सोचता है कि यह कार्य मेरे द्वारा हुआ है । जब श्रीजी कृपा करती हैं तब यह दोष छूटता है । इसलिए सबसे बढ़िया बात यही है कि छोटे बनकर रहा जाए । वृत्रासुर ने भगवान् से कहा कि अब मैं आपका दास नहीं बनना चाहता हूँ । मैं तो आपके दास के दास का दास अर्थात् दासानुदास बनना चाहता हूँ । छोटे को क्या हानि ? जो पहले से ही धरती पर है, वह अब और नीचे कहाँ गिरेगा ? जो ऊँचाई पर होता है, वह गिरता है । वृत्रासुर कहने को असुर थे, किन्तु अच्छे-अच्छे सन्तों से भी ऊँची स्थिति में थे। वस्तुतः वह बहुत बड़े भक्त थे । इसीलिए वृत्रासुर को महाभागवत कहा गया है । उद्धवजी ने भी भागवत में कहा है कि जिन असुरों ने भगवान् से शत्रुता की, क्रोध मार्ग से भगवान् में अपने मन को लगाया उनको मैं असुर नहीं मानता, महाभागवत मानता हूँ । अब ये असुर नहीं रहे । बाबा एक बार गोपीगीत के प्रसंग में कह रहे थे कि वैसे तो भागवत के अनुसार किसी भी भाव से भगवान् में मन लगाओ, सभी भाव ठीक हैं किन्तु देखा जाए तो वैर भाव अधिक बढ़िया है कि गोपी भाव ? प्रेम भाव से भगवान् में मन लगाने से अधिक आनन्द आएगा । कंस को भी दिन-रात भगवान् दिखाई देते थे और गोपियाँ भी दिन-रात कृष्ण को देखती थीं परन्तु गोपियों का भाव अधिक श्रेष्ठ है ? गोपी भाव में जो रस है, वह वैर भाव में नहीं है । श्रीचैतन्य महाप्रभु के परिकर श्रीहरिदास ठाकुरजी में भगवन्नाम के प्रति कितना दृढ़ विश्वास था कि मुसलमानों ने बाईस बाजारों में उन्हें कोड़ों से मारा फिर भी उन्होंने हरि नाम लेना नहीं छोड़ा । श्रीबाबा एक बार कथा में बता रहे थे कि कोई साधारण व्यक्ति एक कोड़े की मार खाकर ही अधमरा हो जाता, किन्तु हरिदासजी को बाईस बाजारों

में घुमाकर कोड़ों से पीटा गया और उन्होंने उसे सहन किया और हरिनाम लेना नहीं छोड़ा; यह शक्ति उनको कहाँ से प्राप्त हुई ? वहाँ नाम की शक्ति साक्षात् प्रकट हो गयी, जो हरिदासजी के हृदय में विराजमान थी । भगवान् का नाम साधारण नहीं है । भगवान् ने अपनी सारी शक्तियाँ अपने नाम में रख नहीं दी हैं बल्कि भगवान् अपनी सारी शक्तियों के साथ स्वयं अपने नाम में बैठ गये हैं; ये है नाम, इसलिए यह भगवान् से भी बड़ा है । भगवान् तो कभी प्रकट होंगे, अपने धाम से अवतरित होंगे, समय लगेगा किन्तु एक बच्चा भी यदि रेत पर भगवान् का नाम लिख दे तो भगवान् नाम रूप में तुरंत प्रकट हो जायेंगे । नाम इतना सहज हो गया है । कलियुग में जीवों पर कृपा करने के लिए भगवान् ने अपनी इज्जत का कोई विचार ही नहीं किया । बहुत से लोग मन्दिरों में अपने नाम के पत्थर लगवा देते हैं । एक बहुत बड़े मन्दिर में फर्श पर अपने नाम के रूप में ये नाम लिखवा दिए - इन्दौर से गोविन्दराम, पटना से राधावल्लभ, काशी से रामचरण.....आदि । उस पर लोग पाँव रखकर चलते थे तो किसी व्यक्ति ने उस मन्दिर के विरुद्ध नयायालय में केस दर्ज कर दिया । उसने कहा कि तुमने अपना नाम अंकित करवाने के चक्कर में भगवान् का नाम लिखवा दिया और उस पर लोग पाँव रखते हैं उस मन्दिर के विरुद्ध केस हुआ और बाद में ऐसे भगवान् के नाम लिखे हुए सारे पत्थर उखाड़ने पड़े । लोगों का भगवान् के नाम में विश्वास नहीं है इसीलिए वे नाम का सम्मान भी नहीं करते और इसीलिए नाम सिद्धि भी नहीं दे रहा है । नाम स्वयं ही सिद्ध है । नाम लेने वाले को कुछ नहीं करना, केवल नाम की महिमा जैसी कही गयी है, उस पर विश्वास करना है, फिर देखो चमत्कार ।

नाम के प्रति आस्था ही सबका सार है । हनुमानजी ने भगवान् से कह दिया कि आप अपने धाम चले जाओ, मैं तो नहीं जाऊँगा । जब हनुमानजी को पहली बार रामजी मिले थे तब तो वे प्रसन्नता से फूले नहीं समा रहे थे, हर समय उनके साथ रहते, उनकी सेवा का हमेशा अवसर ढूँढते रहते थे लेकिन अन्त में उन्हीं भगवान् राम से कह दिया कि आप अपने धाम में जाइए, मैं नहीं जाऊँगा । जब तक पृथ्वी पर आपकी कथा है, तब तक मैं यही रहकर आपकी कथा का आनन्द लेता रहूँगा । आपसे ज्यादा रस तो आपकी कथा में है । देखा जाए तो उसमें सब कुछ आ गया । कथा-कीर्तन में भगवान् स्वयं रहते हैं । उन्होंने स्वयं ही नारदजी से कहा है – **'मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ।'** मेरे भक्त जहाँ मेरे यश का गान करते हैं, मैं वहीं रहता हूँ । हनुमानजी बड़े ही चतुर हैं । उन्होंने सब कुछ ले लिया । सखीशरण महाराजजी जब जीवित थे, वे ऐसे सन्त थे कि उनके पास कभी भी चले जाओ, भगवच्चर्चा के अतिरिक्त वे अन्य कोई बात ही नहीं करते थे ।

मानमन्दिर में सब कुछ सुखपूर्वक और बहुत अच्छा चल रहा है । यहाँ कुछ गलत नहीं हो सकता । शत-प्रतिशत विश्वास है । यहाँ नित्य ही कीर्तन होता है, यह साक्षात् श्रीजी की कृपा है । बाबा महाराज शाम की आराधना में प्रतिदिन सबसे राधा नाम उच्चारण करवाते हैं, स्वयं भी वे राधा नाम लेते रहते हैं । वे राधा नाम लेते हैं तो उनके पास तो वही विश्वास है । यहाँ इतनी बड़ी गोशाला भी इसी **विश्वास** से चल रही है । इतनी बड़ी संस्था चल रही है, सारी व्यवस्था चल रही है । किसी को कोई चिन्ता नहीं है कि सब काम कैसे हो रहा है । वस्तुतः यहाँ तो हम सब लोग श्रीबाबा महाराज की भक्ति का आनन्द ले रहे हैं । उनके विश्वास का हम सब लाभ ले रहे हैं ।

महापुरुषों की जब कोई प्रसादी मिलती है, वे माला देते हैं, वस्त्र देते हैं, उसमें बहुत बड़ी शक्ति होती है । वह हम लोगों को समझ में नहीं आती है । वे कोई फूल भी दे दें तो जब तक वह सूख कर झड़ न जाए, तब तक शरीर से चिपके रहना चाहिए । यही असली बनी-बनायी शक्ति है । गाय तो ढेर सारा घास-फूस खाती है और उसका बछड़ा तो थोड़ा सा मुँह ही थन में लगाता है और उसे पूरा दूध पीने को मिल जाता है । महापुरुषों ने यह बना बनाया दूध दे दिया है । जैसे बन्दरिया मरे हुए अपने बच्चे को शरीर से लगाकर घूमती रहती है, उसी प्रकार महापुरुषों के द्वारा दिए हुए फूल को सूख जाने पर भी अपने साथ लेकर डोलता रहे, जिसको श्रद्धा हो जायेगी, जिसको प्रेम पता पड़ जाएगा कि इसकी क्या शक्ति है । भक्तमाल में कथा है कि सच्चे भक्त के तो मुर्दा शरीर के धुएँ तक से जंगल के भूतों का उद्धार हो गया ।

'बाबाश्री' का बाल्य-प्रभाव

श्रीबाबा के पिता श्रीबलदेवप्रसादशुक्लजी एक अच्छे तैराक थे । वे प्रयाग में त्रिवेणी संगम में तैरने के लिए जाया करते थे । उन्हीं दिनों श्रीबाबा का जन्म हुआ था । एक बार जब वे गंगा-यमुना के संगम में तैर रहे थे, उसी समय अचानक नदी के तेज बहाव में वे बहते चले गये और उनका पता नहीं चला । अब तो चारों ओर हल्ला मच गया कि शुक्लजी डूब गये । कई लोग इसके लिए बाबा को ही दोषी बताने लगे और कहने लगे कि यह तो बड़ा ही अशुभ लड़का पैदा हुआ, जो जन्मते ही अपने पिता को खा गया । शुक्लजी की खोज के लिए संगम में बहुत-सी नावें भेजीं गयीं । अचानक नाव वालों को उनका नदी में डूबता-उतराता चेतनाहीन शरीर दिखाई दिया । नाविकों ने पतवार की सहायता से उनको बाहर निकाल लिया । वे मूर्च्छित हो चुके थे क्योंकि उनके शरीर में पानी भर गया था । उनके शरीर से पानी को बाहर निकाला गया, उपचार किया गया तो वे स्वस्थ हो गये । अब तो जो लोग बाबा को पिता की मृत्यु का दोषी बता रहे थे, वे ही लोग बाबा की प्रशंसा करने लगे और कहने लगे कि अरे, यह लड़का तो बड़ा ही शुभ है, इसके कारण इसके पिता तो मृत्यु के मुख से बाहर निकल आये ।

श्रीबाबा जब तीन-चार वर्ष के रहे होंगे तो उनके एक फूफा थे, उन्होंने बहुत धन कमाया था; उनकी पत्नी अर्थात् बाबा की बुआजी की पहले ही मृत्यु हो चुकी थी और उनके कोई सन्तान नहीं थी । उस ज़माने में बैंकों का प्रबन्ध नहीं था तो अधिकतर लोग अपने धन की सुरक्षा के लिए उसे धरती के भीतर गाड़ दिया करते थे । श्रीबाबा के 'फूफाजी' ने भी धरती के भीतर बहुत-सा सोना-चाँदी आदि द्रव्य गाड़ दिया था किन्तु धर्म के लिए कभी भी उन्होंने धन का व्यय नहीं किया था । एक बार वे बहुत बीमार पड़े तो बाबा के पिताजी उनको देखने के लिए गोद में तीन-चार वर्ष के अल्पायु 'बाबा' को लेकर उनके घर गये । उस समय उनका अन्तिम समय आ गया था और यमदूत उनकी बुरी तरह से पिटाई कर रहे थे । श्रीबाबा के पिताजी को देखकर वे कहने लगे – 'अरे, शुक्लाजी ! देखो, दरोगा बाबू मुझे बहुत बुरी तरह से पीट रहे हैं, मुझे इनसे बचाओ ।' श्रीबाबा के पिताजी समझ गये कि यमदूत इनको यातना दे रहे हैं और धन की वासना के कारण इनके प्राण नहीं निकल रहे हैं तो उनकी सद्गति के लिए उन्होंने उनसे कहा – 'तुमने आज तक इतना पैसा कमाया लेकिन कभी भी धर्म के नाम पर एक पैसा भी तुमने खर्च नहीं किया, उसी का यह दण्ड है, अब भी अपना उद्धार चाहते हो तो अपनी सम्पत्ति को भगवान् के लिए, धर्म के लिए खर्च करने का मुख से ही संकल्प कर लो ।' श्रीशुक्लजी की हित भरी वाणी को सुनकर उन्होंने उनकी गोद में बैठे बालक की ओर संकेत करके कहा – 'इस बालक को यहाँ मेरे पास लाओ ।' जब पिताश्री शुक्लजी 'बाबा' को उनके पास ले गये तो उन्होंने छोटे-से बालक के मस्तक पर हाथ रखकर कहा – 'मेरी सारी सम्पत्ति यहाँ जमीन के भीतर गड़ी हुई है । मैं अपना घर-मकान, अपनी सारी धन-सम्पत्ति इस बच्चे के नाम करता हूँ ।' जैसे ही बाबा को स्पर्श करके उन्होंने ऐसा कहा, उसी समय यमदूत वहाँ से भाग गये, वे भयंकर यमयातना से, यमदूतों के पाश से मुक्त हो गये और सुखपूर्वक उनके प्राण निकल गये । बचपन में ही 'श्रीबाबा' के देह का स्पर्श करके शुभ कार्य का संकल्प करने मात्र से यमदूतों के द्वारा जकड़ा हुआ जीव भयंकर यम-यातनाओं से मुक्त हो गया ।

बाबा जब प्रयाग में रहते थे । उनके साथ के कीर्तन प्रेमी भक्तों ने एक महीने के लिए एक धर्मशाला किराये पर ली । उसमें एक महीने अखण्ड कीर्तन चला । श्रीबाबा कहते हैं कि वह ऐसा कीर्तन था कि इस प्रकार का कीर्तन मेरे जीवन में कभी नहीं हुआ । जहाँ पर भोजन करते थे, वहीं पास में ही शौचालय, स्नान गृह था । कोई भोजन करे, स्नान आदि कुछ भी शरीर की क्रिया करे, हर समय, हर जगह भगवान् का नाम सुनायी पड़ता था । उसमें कीर्तन करने वाले दिन-रात कीर्तन में लगे रहते । एक भक्त हारमोनियम पर कीर्तन करते थे तो सारी रात निकल जाती थी और वे थकते नहीं थे ।

ढोलक बजाने वाले भी थकते नहीं थे, बड़े उत्साह से ढोलक बजाते रहते थे । करताल बजाने वाले करताल बजाते रहते थे । नृत्य करने वाले नृत्य करते रहते थे । सभी भक्त दिन-रात इतने उत्साह से कीर्तन करते थे कि हटने का नाम नहीं लेते थे । हॉल में कीर्तन होता था । वहीं सब भक्त कीर्तन करते थे, नृत्य करते थे । कीर्तन करते-करते कोई थक जाता, नींद आ जाती तो वहीं सो जाता था, सोने के लिए अन्यत्र कहीं नहीं जाता था और जब नींद खुलती तो फिर उत्साह के साथ कीर्तन करने लगता था । श्रीबाबा कहते हैं कि उस कीर्तन ने मेरे मन पर एक अद्भुत संस्कार डाला है, उसी संकीर्तन के प्रभाव से मुझे अखण्ड ब्रजवास की प्राप्ति हो गई । उस कीर्तन से ही प्रेरणा लेकर हमने 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' में भी अखण्ड संकीर्तन करने की परिपाटी रखी ।

प्रयाग में धार्मिक कार्यक्रमों के आयोजनों के लिए एक बहुत ही विशाल भवन था, उसका नाम था 'कृष्ण कुञ्ज' । वहाँ जन्माष्टमी का पर्व तो बहुत ही धूमधाम से मनाया जाता था । वहाँ बहुत सुन्दर कीर्तन हुआ करता था । बचपन में श्रीबाबामहाराज भी 'कृष्णकुञ्ज' में जाया करते थे और वहाँ गाये जाने वाले संगीतमय भजनों-पदों को बड़े ही ध्यान से सुना करते थे । एकबार बाबाश्री ने वहाँ पर श्रीमीराबाईजी का पद सुना – 'मैं तो गिरधर के घर जाऊँ ..... ।' इस पद को सुनकर ब्रजरस में ऐसे निमग्न हुए कि अब तो हर क्षण ब्रज की याद आने लगी ..... कभी-कभी आधी रात में अकेले बलुआ घाट पर बैठकर ब्रज से आती हुई श्रीयमुनाजी को देखते रहते कि ये वही यमुना है जो ब्रजभूमि से आ रही है, इसी याद में घंटों ब्रज-विरह में व्याकुल हो मौन-रुदन करते रहते .....ब्रह्ममुहूर्त की बेला में लगभग ४ बजे पुनः अपने घर शीघ्र लौट आते, ताकि दीदीजी व माताजी 'हमें घर में न देखकर' कहीं इधर-उधर ढूँढने न लग जाएँ .....। धीरे-धीरे ब्रजप्रेम का विरह बढ़ता गया.....फिर घर के सभी प्रकार के बन्धनों को तोड़ने का प्रयास करने लगे ।

बाबाश्री के शब्दों में – 'थोड़ा बड़े होने पर माताजी मुझसे देवी भागवत की कथा सुनती थीं । मैं माताजी को देवी भागवत की कथा सुनाया करता था । आगे चलकर मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया कि यदि मुझे श्रीकृष्ण से मिलना है तो भय को जीतना होगा, अभी तो भविष्य में बहुत-सी परिस्थितियों का सामना करना होगा । फिर तो मैंने सोच लिया कि जहाँ से मेरा मन पीछे हटता है, भयभीत होता है, अब मुझे भय से ही लड़ना है, अपनी कमजोरी को दूर करना है । उसके बाद तो हृदय में कुछ वैराग्य की भावना जागृत हुई तो मैं घर छोड़कर कई बार चित्रकूट भागा । वहाँ के घनघोर जंगलों में मैं पैदल ही एक दिन में पचास मील तक चला करता था । जबकि वहाँ पर हिंसक जंगली पशुओं का बहुत अधिक आतंक था, खुलेआम शेर घूमा करते थे किन्तु मैं 'राधा' नाम लेता हुआ आवेश में भ्रमण करता रहता था । मेरे शरीर पर केवल कौपीन रहती थी और हाथों में कोई पात्र भी नहीं होता था; उस समय चित्रकूट के 'संत-महात्मा' मुझे देखकर बहुत प्रसन्न होते, मेरा बहुत सम्मान करते और मुझे परमहंसजी कहा करते थे ।'

श्रीबाबा जब ब्रज में आये तो जिस दिन उन्होंने घर छोड़ा था, उसी रात वे मानमन्दिर की छत पर सोये । उस समय मानमन्दिर बड़ा ही भयंकर स्थान था । चोर-डाकुओं, भूत-प्रेतों, सर्पों की तथा अन्य भी बहुत-सी बाधायें यहाँ थीं । श्रीबाबा को उस समय भी श्रीराधासुधानिधि पूरी याद थी । इसके चालीसवें श्लोक की यह पंक्ति श्रीबाबा बार-बार अपने हृदय में स्मरण करते थे – 'यत्प्रादुरस्ति कृपया वृषभानु गेहे' – जो अपनी कृपा से वृषभानुभवन में प्रकट होती हैं । 'अस्ति' अर्थात् सदा ही बरसाने में रहती हैं । श्रीबाबा कहते हैं कि उस समय मान मन्दिर में भयंकर से भयंकर बाधाओं को मैं इसी श्लोक के आधार पर सहन कर लेता था कि 'अस्ति' श्रीजी सदा ही इस बरसाने (गह्वरवन) में रहती हैं और उनकी कृपा का अनुभव करता हुआ मैं सदा ही निर्भय बना रहता था । उस समय बाबा एक स्थान पर ही नहीं रहे थे, कभी वे गह्वरवन में किसी पेड़ के नीचे रह लेते, कभी मोर कुटी पर और कभी गोपाल कुटी पर भी रहे थे ।

बरसाने के परम रसिक सन्त वंशीअलीजी द्वारा रचित ग्रन्थ 'वृषभानुपुर शतक' में बरसाना को सहचरी रूप दिया गया है । जहाँ मस्तक पर श्री लाड़ली जी हैं, वृषभानु भवन है, इस तरह से लेटी हुई हैं । मानगढ़, दानगढ़ और मयूर कुटी तक जो शिखर है, ये उसके स्तनमण्डल हैं, गह्वरवन का राधा सरोवर उसका नाभि प्रदेश है । साँकरी खोर नितम्ब प्रदेश है ।

श्रीब्रज-संस्कृति के संरक्षक संत

प्रारम्भिक समय (लगभग सन् २००८ तक) में श्रीगह्वरवन 'बाबाश्री की कुटी' में बालिकाओं की नृत्य-आराधना होती थी । आगे चलकर जब बालिकाओं (आराधिकाओं) की संख्या में वृद्धि हो गयी तो श्रीबाबा की आज्ञा से उनके रहने और नृत्य आराधना के लिए विशाल भवन 'रस कुञ्ज' का निर्माण किया गया । जहाँ पर सच्चाई के साथ निष्काम भाव से 'श्रीराधिकारानी की आराधना' होती है, वह दिव्य स्थान श्रीभक्ति की सुगन्ध से सुवासित होकर मंगलकारी बन जाता है, फिर उस स्थल का कोई भी अनिष्ट-अमंगल (विनाश) नहीं कर सकता क्योंकि वहाँ अनुपम व असीम 'श्रीआराधना की शक्ति' समाहित होती है, जिसके आगे सभी को नतमस्तक होना (झुकना) पड़ता है ।' भविष्य में जब बालिकाओं की संख्या में और अधिक वृद्धि हो गयी तो श्रीबाबा की प्रेरणा से 'रसकुञ्ज' से भी बहुत विशाल आराधना-भवन 'रसमण्डप' का निर्माण कर दिया गया । वर्तमान में इसी आराधना-भवन में सौ से अधिक साध्वियाँ (सैकड़ों आराधिकाएँ) श्रीबाबामहाराज के संकीर्तन में प्रतिदिन लगभग दो घण्टे तक अपने इष्ट श्रीराधामाधव को रिझाने के लिए नृत्य-आराधना करती हैं । श्रीबाबामहाराज ने श्रीकृष्ण-प्रेमिका 'श्रीमीराजी' की तरह आराधिकाओं को विशुद्ध भक्ति (सरस संगीतमयी आराधना 'नृत्य-गान') का मार्ग दिखाया है । समाज के प्रबल विरोध और कटु आलोचनाओं के बावजूद भी श्रीबाबामहाराज ने नारी जाति के लिए निष्काम अनन्य प्रेम रूपा भक्ति का जो मार्ग प्रशस्त किया, उसे युगों-युगों तक याद किया जाएगा ।

एकबार श्रीबाबामहाराज रसकुञ्ज में रात्रि-कीर्तन के समय अपने तखत पर बैठकर महापुरुषों का पद गाने ही जा रहे थे कि उसी समय एक बिच्छू ने उनके हाथ में डंक मार दिया । बिच्छू के काटने पर असह्य पीड़ा होती है, बिच्छू के काटने की पीड़ा पूरे दिन-रात बनी रहती है, चैन नहीं मिलता है, कष्ट के कारण नींद भी नहीं आती है । श्रीबाबामहाराज की ऐसी दिव्य स्थिति है कि बिच्छू ने जब उन्हें काटा तो मान मन्दिर के प्रबन्धक श्रीराधाकान्त शास्त्री (भइयाजी) ने उनसे कहा कि मैं मानपुर गाँव से बिच्छू के विष को उतारने वाले (मंत्रों द्वारा झाड़ा-फूँकी करने वाले) को लाता हूँ, आप तब तक पदगान मत कीजिये किन्तु श्रीबाबा नहीं माने, उन्होंने बिच्छू के काटने की असह्य पीड़ा को सहते हुए ही दो घंटे तक पद गाया । आश्चर्य की बात है कि श्रीबाबा बड़े भाव के साथ पद गाते रहे, उनके चेहरे को देखने पर बिल्कुल भी ऐसा प्रतीत नहीं होता था कि उन्हें बिच्छू काटने की वेदना का अनुभव हो रहा हो । पूरे दो घंटे तक उन्होंने पद गाया, उसके बाद भइयाजी गाँव से मन्त्र पढ़कर उपचार करने वाले को लाये और तब श्रीबाबा ने अपना उपचार करवाया ।

एकबार मानमन्दिर में अपने कक्ष में जब श्रीबाबा बैठे थे तो उन्होंने कहा कि मानगढ़ में गुप्त रूप से कुछ इच्छाधारी नाग रहते हैं । श्रीब्रजराजजी ने पूछा कि बाबा ! वे कहाँ रहते हैं, दिखाई तो नहीं देते हैं । श्रीबाबा ने कहा कि इस समय वे घोड़े बन गये हैं, वे इच्छाधारी नाग हैं, कोई भी रूप धारण कर सकते हैं, वे सबको दिखाई नहीं देते किन्तु मुझे दिखाई पड़ते हैं; वे इच्छाधारी नाग भी नहीं हैं, वे तो पूर्व जन्म के ऋषि-मुनि हैं, उन्होंने पूर्व जन्म में बहुत तप किया था, तब उन्हें वरदान मिला था, उस वरदान के प्रभाव से वे मानमन्दिर में रहकर गुप्त रूप से भजन कर रहे हैं । उस समय श्रीबाबा ने यह भी कहा था कि मानमन्दिर में जितने भी भक्त रह रहे हैं, यदि ये आराधना से जुड़े रहे और मान मन्दिर में अखण्ड रूप से बने रहे तो इन सबको निश्चित ही श्रीराधारानी की प्राप्ति हो जाएगी ।

सन् २०११ की राधाष्टमी से एक महीने पूर्व एक बार श्रीबाबा को रात भर नींद नहीं आयी, वे रात भर जागते रहे । महापुरुषों का रात भर जागना भी किस प्रकार जगत के कल्याण का कारण बन जाता है, यह बाबा के जीवन से पता चलता है । श्रीबाबा को जब नींद नहीं आई तो वे रात भर यही सोचते रहे कि एक महीने बाद राधाष्टमी है । राधाष्टमी बरसाने का प्रमुख उत्सव है, जिस दिन श्रीजी का वृषभानु भवन में प्राकट्य हुआ था । श्रीबाबामहाराज विचार करने लगे कि राधाष्टमी के पर्व पर पूरे देश से लाखों लोग बरसाना आते हैं किन्तु ये लोग केवल मन्दिर में श्रीजी के दर्शन करते हैं, बरसाने की परिक्रमा लगाते हैं और चले जाते हैं । इन लोगों को राधाष्टमी की महिमा का कुछ पता नहीं है कि किस प्रकार इस दिन श्रीजी का श्रीवृषभानुभवन में प्राकट्य हुआ ? राधारानी कौन हैं, उनकी वास्तविक महिमा क्या है ? सभी लोग राधाष्टमी पर्व की महिमा

तथा श्रीजी व उनके माता-पिता की महिमा को जानें, इस सम्बन्ध में श्रीबाबा ने रात को ही विचार किया कि अबकी बार राधाष्टमी के अवसर पर मानमन्दिर के रसमण्डप हॉल में बड़े स्तर पर एक नाटिका का मंचन किया जाए, उसमें शास्त्रों एवं ब्रज के रसिकाचार्यों के ग्रन्थों के आधार पर श्रीजी की जन्मलीला का अच्छे ढंग से प्रदर्शन किया जाए तो इससे लोगों को बहुत लाभ होगा । इस नाटिका में राधा जन्म लीला किस प्रकार प्रदर्शित की जाएगी, इसमें कौन-कौन से पात्र होंगे, किसको क्या बनना है, यह सब श्रीबाबा ने रात में ही विचार कर लिया । सुबह के दैनिक सत्संग में श्रीबाबा ने सभी को अपनी इस योजना से अवगत करा दिया कि इस बार राधाष्टमी के पर्व पर मान मन्दिर की ओर से राधाष्टमी की नाटिका का आयोजन किया जायेगा । श्रीबाबा जिस कार्य का संकल्प कर लेते हैं, उसे पूर्ण होने में देर नहीं लगती है । श्रीबाबा की शुभ अभिलाषा को पूर्ण करने हेतु श्रीजी की कृपा से विधान बनता गया और मुम्बई से 'श्रीदिलीप मेहराजी' जिन्होंने रामानन्द सागर के प्रसिद्ध टी.वी. धारावाहिक रामायण में भी अभिनय किया है, वे मानमन्दिर आये और उन्होंने श्रीबाबा के सामने नाटिका का निर्देशन करने की आज्ञा माँगी । श्रीबाबा ने उन्हें स्वीकृति प्रदान कर दी और राधाष्टमी नाटिका का किस प्रकार मंचन किया जाए, इसकी सारी स्क्रिप्ट तैयार करके उन्हें दी । क्या-क्या दृश्य दिखाये जायेंगे, कौन क्या अभिनय करेगा, यह सब श्रीबाबा ने दिलीप मेहराजी को बता दिया । श्रीबाबा की आज्ञा से मान मन्दिर की साध्वियों एवं साधुओं ने ही इस नाटक में अभिनय किया । राधाष्टमी का शुभ दिन आया और रस मण्डप हॉल में रात को आठ बजे से नाटक आरम्भ हुआ और एक-दो बजे तक चला । श्रीबाबा महाराज की कृपा से इस नाटिका का शास्त्रोक्त विधि से इतना उत्कृष्ट मंचन किया गया कि पूरा हॉल सारी रात दर्शकों से भरा रहा और सभी को यह नाटिका बहुत अधिक पसन्द आई । नाटिका के बीच-बीच में उससे सम्बन्धित दृश्यों के बारे में श्रीबाबा दर्शकों को समझाया करते थे । उसी दिन श्रीबाबा ने सभी के समक्ष यह भी घोषणा कर दी कि अगले वर्ष रंगीली होली के पर्व पर बरसाने की रंगीली होली की नाटिका का आयोजन किया जाएगा । फिर क्या था, अगले वर्ष रंगीली होली नाटिका के मंचन हेतु भी उसकी सारी शास्त्रोक्त स्क्रिप्ट श्रीबाबा ने तैयार करके नाटक के निर्देशक श्रीदिलीप मेहरा को दी । उन्होंने भी श्रीबाबा महाराज के निर्दशानुसार ही रंगीली होली नाटिका का मंचन किया । यह नाटिका भी बहुत सफल रही और दर्शकों ने इसे बहुत पसन्द किया । इसके बाद श्रीबाबा ने कहा कि गोस्वामी नाभाजी कृत भक्तमाल में भगवान् के विशुद्ध भक्तों के चरित्रों का वर्णन किया गया है, जिनको पढ़ने-सुनने से भगवद्भक्ति की सहज में ही प्राप्ति होती है, अतः भविष्य में राधाष्टमी एवं रंगीली होली के पर्व पर भक्त चरित्रों से सम्बन्धित नाटिका का भी आयोजन किया जाएगा । इस नाटिका का मंचन करने वाली समिति का नामकरण भी श्रीबाबा ने किया – 'मान मन्दिर कला अकादमी ।' इस तरह अब प्रतिवर्ष 'राधाष्टमी और रंगीली होली' के परम पावनमय पर्व पर श्रीबाबामहाराज की प्रेरणा से 'श्रीराधाकृष्णलीला' के साथ ही 'श्रीभक्तचरित्रों' का मंचन 'मानमन्दिर कला अकादमी' के द्वारा किया जाता है ।

श्रीराधामाधव की रसोमयी आराधना में सहायक एक **'संगीत विद्यालय'** खोलने की श्रीबाबामहाराज की हार्दिक अभिलाषा है । इसके बारे में श्रीबाबामहाराज स्वयं बताते हैं कि एक बार स्वप्न में मुझे आकाश में एक देवी खड़ी हुई दिखायी दीं । उन्हें देखने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि ये तो श्रीराधारानी हैं । उन्हें देखकर मैंने प्रार्थना की – 'हे राधे ! ऐसी कृपा कीजिए कि मान मन्दिर में एक संगीत विद्यालय खुल जाए ।' मेरे द्वारा ऐसा कहने पर वे कुछ बोलीं नहीं, केवल मुस्कुरा दीं और दोनों हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में खड़े किये । मैं समझ गया कि श्रीजी ने मेरी अभिलाषा को पूर्ण करने की स्वीकृति प्रदान कर दी है । इसके कुछ समय बाद मान मन्दिर में संगीत के बड़े-बड़े कलाकार बिना किसी शुल्क के अपने कार्यक्रम की प्रस्तुति देने के लिए आने लगे और सिखाने के लिए भी तैयार हो गये, मैं समझ गया कि श्रीराधारानी की कृपा से ऐसा हो रहा है । अब तो संगीत के प्रसिद्ध कलाकर वाद्य, गायन और नृत्य की प्रस्तुति के लिए मान मन्दिर में आते रहते हैं और बिना किसी शुल्क के ही यहाँ की साध्वियों को वे संगीत की ये तीन विधायें (नृत्य-गान-वाद्य) सिखा रहे हैं । **'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते ।'** गीत, वाद्य एवं नृत्य – इन तीन के संयोग से ही संगीत बना है । श्रीराधामाधव की सरस भक्ति में संगीत का बहुत अधिक महत्त्व है । स्वयं श्यामसुन्दर वंशी वादन करते हैं, जो त्रिलोकी को मोहित कर देती है । इसी प्रकार श्रीजी मधुमती नामक

वीणा का वादन करती हैं । ये दोनों ही अत्यन्त ही मधुर गान करते हैं । नृत्य कला में भी श्रीश्यामा-श्याम अत्यन्त निपुण हैं । श्रीजी की सखियाँ भी संगीत कला में अत्यधिक कुशल हैं । उनके बारे में श्रीहित हरिवंश महाप्रभु लिखते हैं – 'एक ते एक संगीत की स्वामिनी ।' श्रीराधामाधव की महारास लीला में संगीत की तीनों विधाओं का बहुत ही उत्कृष्ट प्रदर्शन होता है । संगीत के माध्यम से श्रीराधामाधव की उपासना करने में यह रसोमयी उपासना बनती है और चित्त को रस मिलता है । जब तक मन को रस नहीं मिलता, तब तक यह भगवान् में तन्मय नहीं होता और इसकी अनादिकाल की विषय आसक्ति नहीं छूट सकती है । संगीत के माध्यम से आराधना करने से ही चित्त का भगवान् में अच्छी प्रकार संयोग होता है और विषय आसक्ति का नाश होता है । इसीलिए श्रीबाबामहाराज श्रीमानमन्दिर (गह्वरवन) में संगीत विद्यालय स्थापित करना चाहते हैं । इस विद्यालय में 'भारत के प्रख्यात संगीतज्ञ' संगीत के जिज्ञासु आराधक व आराधिकाओं को निःशुल्क रूप से संगीत की शिक्षा देंगे ।

एक बार मथुरा में एक प्रतिष्ठित संस्था के द्वारा श्रीबाबा को 'ब्रजरत्न' की उपाधि से सम्मानित करने के लिए बुलाया गया । सुदैन्य भाव के साक्षात् स्वरूप 'श्रीबाबा' ने कहा कि हम ब्रज के रत्न तो क्या, ब्रज के एक कीड़े से भी अधिक निम्न (नीच) हैं; इसलिए इस सम्मान को ग्रहण करने के हम सर्वथा अयोग्य हैं । 'बाबाश्री' ऐसा कहकर 'ब्रजरत्न' की उपाधि का सम्मान लेने नहीं गये (जिस समय श्रीबाबामहाराज को सम्मान-प्राप्ति के लिए आमंत्रित किया गया था, उस समय बाबाश्री संध्याकालीन सत्संग (श्रीभक्तमाल-कथा) करने रसकुञ्ज में जा रहे थे, श्रीबाबा ने अपनी अति दीनता दिखाते हुए मथुरा जाने से मना कर दिया और अपने निर्धारित समय पर कथा कहने के लिए बैठ गए ।)

जिस समय भारत सरकार के द्वारा श्रीबाबामहाराज को गोसेवा एवं ब्रज की सेवा हेतु प्रतिष्ठित 'पद्मश्री' पुरस्कार देने की घोषणा की गयी । इसके लिए उन्हें दिल्ली में राष्ट्रपति भवन में निमन्त्रित किया गया किन्तु 'श्रीबाबा' पुरस्कार के लिए तो कोई कार्य करते नहीं हैं, मान-प्रतिष्ठा से वे कोसों दूर रहते हैं तथा ब्रज के बाहर भी वे नहीं जाते हैं । इसलिए श्रीबाबा दिल्ली नहीं गये । सरकार ने देखा कि श्रीबाबा पुरस्कार लेने के लिए दिल्ली नहीं गये तो उन्हें उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में राज्यपाल के द्वारा पुरस्कार को लेने हेतु आमन्त्रित किया गया । वहाँ भी वे नहीं गये तो उन्हें मथुरा बुलाया गया कि डी. एम. के हाथों पुरस्कार ग्रहण कर लें किन्तु श्रीबाबा मथुरा भी नहीं गये । जब श्रीबाबा पुरस्कार लेने कहीं नहीं गये तो अन्त में भारत सरकार ने मथुरा के डी.एम. को आदेश दिया कि मानमन्दिर में ही जाकर श्रीबाबा को पद्मश्री पुरस्कार दे आओ । भारत सरकार के आदेश से मथुरा के डी. एम. व अन्य अधिकारी मानमन्दिर (रसमण्डप) में आये और यहीं पर श्रीबाबामहाराज को 'पद्मश्री' पुरस्कार प्रदान किया । उन्होंने कहा कि ऐसा पहली बार हुआ कि 'पद्मश्री' पुरस्कार लेने कोई कहीं नहीं गया, इसलिए हम लोग भारत सरकार के प्रतिनिधि के रूप में यह पुरस्कार आपको श्रीमानमन्दिर में ही प्रदान करने के लिए आये हैं ।

श्रीबाबा महाराज कहते हैं कि जब से मैं ब्रज में आया, तब से प्रायः ब्रज का विनाश होते ही देखा । इसलिए मैंने तो केवल राधारानी के नाम का ही आश्रय लिया और सदा उनके नाम का संकीर्तन ही करता रहा । जब मैं सायं कालीन आराधना के लिए बैठता हूँ तो इस भाव से कीर्तन करता हूँ कि इससे देश का और सम्पूर्ण विश्व का मंगल हो । श्रीमद्भागवत में धर्मराज ने कहा है – **तस्मात् सङ्कीर्तनं विष्णोर्जगन्मङ्गलमंहसाम् ।** (श्रीभागवतजी ६/३/३१) भगवान् का संकीर्तन करने से समस्त विश्व का मंगल होता है । भारतवर्ष व ब्रजभूमि की सनातन संस्कृति का विनाश होते हुए देखकर अत्यन्त दुःखी 'श्रीबाबामहाराज' चाहते थे कि इस देश में सत्ता परिवर्तन हो और देश हित के लिए कार्य करने वाली राजनीतिक पार्टी शासन करे । श्रीबाबामहाराज कहते हैं कि मैं इसी आशय के साथ सायंकालीन आराधना में कीर्तन करता था । इसका परिणाम यह हुआ कि चमत्कार हो गया, सर्वथा असम्भव प्रतीत होने वाला कार्य सम्भव हो गया । 'भारत' देश का हित चाहने वाले सच्चे देशभक्त शासक सत्ता में आये हैं, जिनके द्वारा गौरवशालिनी भारतीय संस्कृति के उत्थान के लिए बड़े-बड़े सेवाकार्य सम्पन्न हो रहे हैं; इससे निश्चित हो रहा है कि भारतवर्ष फिर अपने स्वरूप में (विश्वगुरु बनकर) स्थापित होगा । आध्यात्मिक दृष्टि से देखा जाए तो यह सब श्रीबाबामहाराज जैसे संत-महापुरुषों की निष्काम 'संकीर्तन-आराधना' का ही चमत्कार है कि अच्छे देशभक्त शासक जन शासन कर रहे हैं और राष्ट्रहित के कार्य में सचाई के साथ संलग्न हैं ।

बाबाश्री (युवावस्था का छायाचित्र)

बाबाश्री के अनुभव

(१२/७/२०१२) लगभग साठ साल पहले जब मैं चित्रकूट में भ्रमण कर रहा था तो एक बार अनुसूयाजी गया । उस समय का मेरा जीवन जैसा था, वैसा जीवन न कभी लौटा और न कभी लौटेगा । तब मैं केवल कौपीन पहनता था, कोई पात्र भी हाथ में नहीं होता था । मन्दाकिनी का पानी मैं पी लेता था और जंगलों में घूमा करता था । उस समय वहाँ बड़ा जंगल था । वर्तमान में तो वहाँ बड़ी सड़क निकल गयी है, वह मध्य प्रदेश की ओर जाती है । अब वहाँ पहले जैसी सघनता नहीं रही । जब मैं वहाँ गया था तो दिन में शेर घूमते रहते थे । प्राचीन युग में जब अत्रि मुनि वहाँ तप करते थे तो एक बार उनको बहुत प्यास लगी । उनके तप के प्रभाव से वहाँ मन्दाकिनी प्रकट हुई, उसे मन्दाकिनी गंगा भी कहते हैं । उसके कई नाम हैं, एक नाम त्रिवेणी भी है । अनुसूया के आश्रम के पहले ही मन्दाकिनी की जलधारा निकलती है । जहाँ से धारा निकलती है, वहाँ थोड़ा वेग भी है । वर्षा ऋतु में इतना वेग हो जाता है कि मनुष्य टिक नहीं सकता । मैं भी जब शरभंग से लौट रहा था तो अमरावती के बाद अनुसूया पड़ता है । जब मैं अमरावती में आया तो वहाँ एक सन्त मिले । उन्होंने मुझसे पूछा कि कहाँ जा रहे हो ? मैंने कहा कि मैं अनुसूया जा रहा हूँ । उन्होंने कहा कि अभी नहीं जाओ क्योंकि वर्षा हुई है । वर्षा में एकदम से बड़े वेग से पानी बढ़ता है, ऐसा नहीं कि धीरे-धीरे आता है । इतने वेग से पानी आता है कि उस वेग को हाथी भी नहीं सह सकता । मैंने पहले कभी पहाड़ी दृश्य देखे नहीं थे, इसलिए मैंने उन सन्त से कहा कि पानी बढेगा तो उसे देखकर मैं जल्दी से दौड़ जाऊँगा किन्तु मुझे यह पता नहीं था कि यह पहाड़ी नदी है । मैने जैसे ही उसमें अपना पाँव रखा, एकदम से पानी का वेग आया । वहाँ से बहाकर नदी नीचे गिरती है । इतनी ऊपर से गिरने पर हाथ-पाँव टूट जायेंगे । मैं उस वेग में फँस गया । वेग मुझे वहाँ ले चला, जहाँ से पानी नीचे गिरता है । वह घटना अब तक मुझे याद है । मैंने समझ लिया कि आज मेरे जीवन का अन्तिम दिन है । आज नहीं बच सकता क्योंकि पानी आगे की ओर खींच रहा था, जहाँ से नीचे गिरना है । मैंने सोचा कि ये मेरे जीवन का अन्तिम दिन है, यदि ब्रज में मरता तो अच्छा होता । उस समय मुझे ब्रज की याद आई, फिर सोचा कि चलो, चित्रकूट भी भगवान् का धाम है, एक बार संसार को देख लें । मुझे याद है कि मैंने देखा तो जंगल के पत्तों से पानी की बूँदें गिर रही थीं क्योंकि वर्षा हुई थी । मैं राधे-राधे कह रहा था और पानी आगे खींच रहा था । इतने में वेग कुछ घटा । जब वेग घटा तो मेरी हिम्मत कुछ बढ़ी और जल्दी से चार हाथ दौड़कर मैं पार हुआ । वेग घटने से पहले एक शिला मेरे हाथ में आ गयी थी । उसको मैंने पकड़ लिया था, तब मैं वहाँ का दृश्य देख पाया था । जैसे ही मैं नदी के पार हुआ, मैंने मुड़कर देखा, बड़ी जोर से वेग आया । इतनी तेजी से वेग आया कि यदि मैं वहीं होता तो समाप्त हो गया होता किन्तु भगवान् ने रक्षा की । अनुसूया की जब चर्चा चलती है, तब मुझे यह घटना याद आती है ।

(८/१२/२०१२) चित्रकूट में भ्रमण करते समय जब मैं विराध कुण्ड के पास जंगलों में पहुँचा था, चित्रकूट से ४०-५० मील दूर पहाड़ पर, जहाँ भगवान् राम ने विराध को मारा था । उस समय वह धरती फोड़कर भीतर घुस गया था । उस समय मुझे कुछ पता नहीं था, मैं भावावेश में कीर्तन करता हुआ भागता जा रहा था । वहाँ बहुत बड़ी खाई (गड्ढा) है । उसमें चारों ओर पेड़ हैं । विराध कुण्ड ढँका सा रहता है । मैं आँख बन्द करके राधे-राधे चिल्लाता हुआ चला जा रहा था । चलते-चलते अचानक मेरी आँख खुली तो देखा कि नीचे पाँव जाने वाला था । नीचे विराध कुण्ड था ।

आपका नाम राधा है, राधा माने बाधा हरणी , जो बाधा हरती हैं, वे हैं राधा

मेरा शरीर काँप गया क्योंकि वह ऐसा गड्ढा है कि उसमें गिरने के बाद फिर बाहर निकलने की कोई सम्भावना नहीं है । कुछ देर मैं वहाँ खड़ा रहा तो उसके भीतर से बड़ी आवाजें आ रही थीं । उसके भीतर पता नहीं कितने ही जानवर होंगे ।

(९/८/२०१३) साठ साल पहले जब मैं चित्रकूट गया था, तब वहाँ जंगल थे, अब तो शहर बन गया है । किसी ने बताया कि अब तो कर्वी और चित्रकूट एक हो गये हैं, शहर इतना बढ़ गया है । जब मैं ६० साल पहले वहाँ गया था तो सीतापुर में दिन में एक शेर आ गया था । बाँकेसिद्ध की गुफाओं में मैं रहता था तो वहाँ एक शेर दिन में एक भैंस को बकरी की तरह कन्धे पर रखकर ले गया था । अब तो सभी जगह जंगल कट गये हैं, सड़कें बन गयी हैं । मैं जब वहाँ गया था तो बहुत बड़ा जंगल था । एक बार भ्रमण करते हुए मैं ददरी के जंगल में गया । वहाँ एक स्थान है मारकुंडी, जहाँ मारकण्डेय ऋषि ने तप किया था । मुझे वहीं जाना था । ददरी में एक महन्त था, उसने मुझे बुलाया था । मैं वहाँ चला गया था । जंगल में उसकी बिल्डिग थी । रात हो गयी थी, इसलिए उसने किवाड़ नहीं खोली । उस समय भगवान् ने मेरी रक्षा की । मैं बाहर ही पड़ा रहा । यद्यपि रात में वहाँ बहुत भय था । उस महन्त ने रात हो जाने के कारण अपनी कुटिया का दरवाजा नहीं खोला क्योंकि उस ज़माने में वहाँ बहुत से डाकू रहते थे । मैं सबेरे जल्दी उठकर चला गया, रास्ता भी नहीं जानता था । मैंने सोचा कि अन्दाज से मारकुंडी पहुँच जाऊँगा । जब मैं मारकुंडी के पास पहुँचा तो वहाँ बहुत से हिरन भागते हुए जा रहे थे । पहाड़ के नीचे एक खाई सी थी, वहाँ से एक शेर आ रहा था । मैंने उसको देखा और फिर मैं मारकुंडी के आश्रम में चला गया । वहाँ एक सन्त रहते थे, उन्होंने किवाड़ खोली क्योंकि रात में वहाँ सभी सन्त अपनी किवाड़ें बन्द कर लेते हैं । मैंने उनसे कहा कि आज मैं बच गया, नीचे से एक शेर जा रहा था और ऊपर से हिरन भाग रहे थे । वे सन्त बोले – 'हाँ, शेर जा रहा था लेकिन वह मठार रहा था ।' भरपेट खाने के बाद जैसे हम लोग डकार लेते हैं, वैसे ही जब शेर का पेट भर जाता है तो वह डकार लेता है, उसके डकार लेने को मठार कहते हैं । मैंने कहा कि शेर की तो मठार भी इतनी जोर की होती है । सन्त ने कहा – 'हाँ, इसीलिए हिरन चौकड़ी भर रहे थे ।'

(२८/९/२०१२) लगभग सत्तर साल पुरानी बात है, जब मैं पहली बार ब्रज में आया था । ब्रज में आने पर अच्छे महात्माओं के दर्शन करने की इच्छा हुई । वृन्दावन में रमण रेती में एक हाथी बाबा रहते थे । उस समय रमण रेती में कोई बिल्डिग नहीं थी । मैं उनके दर्शन करने गया । एक बड़े टीले पर छप्पर था । छप्पर के नीचे एक तखत पड़ा था । उस तखत पर विशाल लम्बे-चौड़े शरीर के सन्त विराजमान थे । लोगों ने बताया कि यही हाथी बाबा हैं । उनका शरीर विशाल था, इसलिए लोग उनको हाथी बाबा कहते थे । मैं उनके पास गया और उनको प्रणाम किया । मुझे देखकर उन्होंने पूछा – 'क्या साधु बन गया है ?' मैंने कहा – 'बन तो नहीं गया किन्तु बनना चाहता हूँ ।' हाथी बाबा – 'मेरे पास क्यों आया ?' मैं – 'आपका कुछ उपदेश सुनने के लिए ।' हाथी बाबा – 'तूने लड्डू गोपाल देखे हैं ?' मैं – 'हाँ, देखा तो है ।' हाथी बाबा – 'उनके हाथों में क्या है ?' मैं – 'उनके एक हाथ में लड्डू है और दूसरे हाथ में वंशी है ।' हाथी बाबा – 'इसका मतलब समझा ?' मैं – 'आप समझाइये ।' हाथी बाबा – 'गोपालजी कहते हैं कि बेटा ! वृन्दावन में दो चीजें हैं, लड्डू है और वंशी है । लड्डू ले ले चाहे वंशी ले ले । लड्डू लेगा तो वंशी नहीं मिलेगी और वंशी लेगा तो लड्डू नहीं मिलेगा । वृन्दावन में रहते समय लड्डुओं की लुडक से बचकर रहना, तब वंशी मिल जायेगी । अधिकतर लोग जो यहाँ साधु बनने के लिए आते हैं, वे लड्डुओं में लुडक जाते हैं । वे इसी खोज में रहते हैं कि आज कहाँ पंगत है, कहाँ पंगत की चिट्ठी बँट रही है ? इसीलिए उनको वंशी नहीं मिलती है । लड्डुओं से बच जाओगे तो वंशी मिल जायेगी ।' यह उपदेश उन्होंने मुझको दिया था । यही उपदेश मेरे गुरुदेव बाबा प्रियाशरणजी महाराज ने मुझको दिया था । उस समय मैं मधुकरी माँगता था तो उन्होंने कहा था कि तुम केवल १२ साल ब्रज में मधुकरी ही माँगते रहोगे तो सिद्ध हो जाओगे किन्तु मधुकरी को पेट भरने का साधन मत बना लेना । इसे अपनी वृत्ति बना लो कि भिक्षा में जो भी मिलेगा, वही खाऊँगा । आज यहाँ पंगत है, आज वहाँ पंगत है, उसमें चलना चाहिए । यह सब नहीं चलेगा । मैंने बाबा की आज्ञानुसार उनके बताये हुए ढंग से ही भिक्षा माँगी । यहाँ तक कि मैं श्रीजी के मन्दिर में होने वाली पंगत में भी नहीं

जाता था । बड़ी-बड़ी पंगतों में मुझे बड़े-बड़े महापुरुष बुलाते थे किन्तु मैं उसमें नहीं जाता था । मेरे गुरुदेव ने मुझे जो शिक्षा दी थी, उसी वृत्ति पर मैं दृढ़ रहा । मैं सिद्ध तो नहीं बना किन्तु इतना अवश्य है कि बिना माँगे ही ब्रजवासियों का ही अन्न मुझे मिल जाता है । ब्रजवासियों के ही शुद्ध अन्न से मेरा सब काम चल रहा है । ब्रजवासियों के ही सहयोग से ब्रजयात्रा चल रही है । कहीं से भी आज तक न मुझे दो पैसा माँगना पड़ा और न ही चन्दा करना पड़ा, न आशा करना पड़ा । इसको भी एक तरह की सिद्धि मान लिया जाए तो कोई गलत बात नहीं है । (२२/२/२०१३) एक बार मैं मान मन्दिर में बैठा था तो एक विचित्र घटना घटी । एक गुजराती व्यक्ति आया, जो बड़ा पढ़ा-लिखा था और ब्रज में अकेले घूम रहा था । उसके एक हाथ में एक थैला था, जिसमें मूँगफलियाँ थीं । उसने मुझे बताया कि मैं ब्रज चौरासी कोस की परिक्रमा कर रहा हूँ । मैंने पूछा कि अकेले कर रहो तो उसने कहा – 'हाँ, मैं अकेले ही विश्व का भ्रमण कर आया हूँ ।' मैंने पूछा कि तुम्हारे पास सामान क्या है तो उसने कहा कि मेरे पास एक थैला है, उसमें मूँगफलियाँ हैं, भूख लगती है तो उन्हीं को खा लेता हूँ । न कहीं माँगना, न भोजन बनाना, न किसी होटल में जाना । वह मेरे पास बैठ गया तो मैंने उससे पूछा कि तुम कहाँ-कहाँ घूम आये हो तो उसने बताया कि मैंने अमेरिका से दर्शन शास्त्र से पी. एच. डी. की है । मैं बरसाने में आया तो लोगों ने आपका नाम मुझे बताया । इसलिए मैं आपसे मिलने के लिए आया हूँ । फिर उसने कहा कि मैं आपसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ ? प्रश्न यह है कि बुद्धिमान व्यक्ति का क्या लक्षण है ? यह प्रश्न मैंने बहुत लोगों से किया किन्तु इसका सही उत्तर आज तक कोई दे नहीं पाया । लोग कई प्रकार के उत्तर देते हैं । किसी ने कहा कि बुद्धिमान व्यक्ति दूरदर्शी होता है, दूर की सोचने वाला होता है, सूक्ष्म सोचने वाला होता है । इस तरह लोग बुद्धिमान व्यक्ति के अनेक गुण बताते हैं लेकिन अभी तक मुझे कोई ऐसा उत्तर नहीं मिला, जिससे कि मैं सन्तुष्ट हो जाऊँ । उत्तर भी संक्षेप में होना चाहिए । उस व्यक्ति की बात सुनकर मैंने कहा कि तुम मुझसे अधिक पढ़े-लिखे हो, तुमने दर्शन शास्त्र में अमेरिका से पी.एच.डी. किया है तो फिर मैं तुम्हें क्या बताऊँ ? वह बोला – 'फिर भी आप बताइए ।' मैंने बताया कि चाणक्य ने कहा है – बुद्धेः फलं अनाग्रहः । उस व्यक्ति ने कहा कि इसको आप समझाइये । मैंने बताया कि बुद्धिमान व्यक्ति हठ नहीं करता है । इस बात को सुनकर वह व्यक्ति चुप हो गया और कुछ देर सोचने के बाद बोला – 'बुद्धिमान व्यक्ति के बारे में मैंने अब तक संसार की जितनी भी परिभाषायें पढ़ी हैं, कोई भी इसके बराबर की नहीं हैं, जो आपने बतायी । ऐसा मैं बहुत देर सोचने के बाद कह रहा हूँ । मैंने संसार के बड़े-बड़े विद्वानों से भेंट की है किन्तु आपने बुद्धिमान व्यक्ति का जो लक्षण बताया, ऐसा आज तक कोई नहीं बता पाया ।' मैंने उसको बताया कि ऐसा मैंने नहीं कहा है, यह तो चाणक्य ने कहा है । वह बोला – 'वाह ! कमाल कर दिया ।' वस्तुतः हठ के कारण ही संसार में लड़ाई-झगड़े, वैर, आपसी फूट और कलह होते रहते हैं । जिसमें हठ नहीं है, वह निश्चित ही बुद्धिमान है । वह गुजराती व्यक्ति मेरी बात को सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और एक रात मूंगफली खाता हुआ मानगढ़ में भी रुका ।

(१०/३/२०१३) जब मैं ६०-७० पहले मान मन्दिर में आया था तो यहाँ की ही एक घटना है । उस समय मेरा किसी से परिचय नहीं था । कोई ब्रजवासी मुझे जानता नहीं था । अकेले मन्दिर में ऊपर मैं रहता था । आगे चलकर तो बहुत से लोग मुझे जान गये । एक बार मुझे बहुत तेज बुखार हो गया । अब तो मन्दिर बदल गया है, उस समय गुफा की ओर जाने के लिए टूटे-फूटे फर्श थे, बीमारी के कारण मैं वहीँ पड़ गया । बहुत तेज प्यास का अनुभव हो रहा था । मैं प्रतिदिन मानपुर गाँव में भिक्षा माँगता था, उस दिन बुखार के कारण मैं भिक्षा माँगने नहीं जा सका था । दोपहर तीन-चार बजे का समय था । अचानक ही कोई दर्शनार्थी आया । वह कौन था, यह मैं नहीं जान सका । उसने मुझसे पूछा – 'बाबा ! मन्दिर में दर्शन अभी बन्द है ?' मैंने कहा – 'हाँ, इस समय पट बन्द है ।' उसने पूछा – 'बाबा ! तुम इस प्रकार से क्यों पड़े हो ?' मैंने कहा – 'मुझे बुखार है ।' उस व्यक्ति ने मुझसे पूछा कि क्या तुमको प्यास लगी है ? मैंने कहा – 'हाँ, प्यास लगी है ।' उस व्यक्ति ने मुझे पीने के लिए पानी दिया । मुझसे गलती यह हो गयी कि मैंने उसका पता आदि कुछ नहीं पूछा । उसके दिए हुए पानी को मैंने पिया । उस पानी को पीते ही बुखार भी उतर गया और भूख भी लगने लगी । मैंने

सोचा कि यह आदमी कौन है, इससे पूछूँ, जैसे ही विचार किया तब तक वह आदमी मान मन्दिर के दरवाजे से होकर बाहर चला गया । उसको मैंने दरवाजे तक जाकर देखा, किन्तु वह दिखाई नहीं दिया । इसके बाद मैं भिक्षा लेने स्वयं मानपुर में गया । यह उदाहरण था योगक्षेम का, कोई संकट आया और उस संकट में अकस्मात् ही सहायता मिल गयी; ऐसा भगवदिच्छा से होता है ।

'बाबाश्री' के प्रति 'श्रीराधानाथस्वामी' के भावोद्गार

इस्कॉन संस्था के संत 'श्रीराधानाथस्वामीजी' द्वारा अपनी पुस्तक-The journey home – 'अनोखा सफर' में श्रीबाबा के प्रति व्यक्त किये गये उद्गारों से संकलित - मैं अमेरिका से आध्यात्मिक उपलब्धि के लिए भारत आया और पूरे देश के विभिन्न तीर्थस्थलों में मैंने भ्रमण किया, हिमालय गया, वहाँ के तीर्थों में भ्रमण किया तथा वहाँ के अनेकों साधु-सन्तों से मिला । अन्त में भ्रमण करते हुए मैं ब्रजभूमि में पहुँचा । कुछ दिनों तक वृन्दावन में रहा । वहाँ के सन्त कृष्ण दास बाबा, बॉन महाराज और असीम ने एक दिन मुझे बरसाना जाने का सुझाव दिया । वृन्दावन के एक अन्य प्रसिद्ध सन्त घनश्याम बाबा ने भी मुझे बरसाना जाने के लिए कहा था । उन्होंने मुझे बरसाना के दूरस्थ पर्वतों (ब्रह्माचल पर्वत) पर रहने वाले एक वैरागी साधु के पास रहने का सुझाव दिया । मैं बरसाना गया । सबसे पहले पर्वत पर चढ़कर श्रीजी मन्दिर के दर्शन किये, उसके बाद राजा के मन्दिर होता हुआ गह्वर वन में पहुँचा । इस मनमोहक वन की पगडंडियों पर आनन्दपूर्वक चलता हुआ मैं उस पवित्र पर्वत (मानगढ़) तक पहुँचा, जहाँ वे साधु निवास करते थे । शाम हो चुकी थी और मैंने अपने सामने एक ऊँची चढ़ाई देखी । सीढ़ी के नाम पर ऊबड़-खाबड़ पत्थर थे, जिन पर कठिन परिश्रम से चढ़कर मैं उन साधु बाबा के निवास तक पहुँचा । शिखर पर मैंने एक सुनसान दिखता जीर्ण-शीर्ण मन्दिर पाया । उस समय तक अँधेरा हो गया था । मन्दिर के भीतर एक लकड़ी की वेदी पर राधा-कृष्ण का एक धुंधला चित्र रखा हुआ था । उसी समय मुझे एक मृदु स्वर सुनायी दिया – 'तुम्हें बहुत दूर से यहाँ बुलाया गया है । मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ ।' मैं पीछे मुड़ा तो देखा कि खण्डहर के एक अँधेरे कोने में एक साधु बैठे थे । उनका सिर घुटा हुआ था और बड़ा पेट पतले अंगों की तुलना में अलग दिख रहा था । एक कौपीन (लंगोटी) के अतिरिक्त उनके तन पर अन्य कोई वस्त्र नहीं था । लगभग चालीस वर्ष की अवस्था के वे पूरी तरह से विरक्त दिख रहे थे । ऐसा प्रतीत होता था कि वे ऐसे जगत में झाँक रहे हों, जिसे आँखें नहीं देख सकती थीं । मैंने उन्हें अपना परिचय दिया और पूछा – 'क्या आप इस स्थान के विषय में मुझे कुछ बता सकते हैं ?' उन सन्त ने आँखें मूँद लीं और गहन विचारों में डूब गये, फिर बोले – 'तुम मानगढ़ में आये हो, जो मान भरे प्रेम का पर्वत है । श्रीकृष्ण के प्रति अपने अद्वितीय प्रेम को व्यक्त करने के लिए श्रीराधा इस स्थान पर मान लीला करती हैं और श्रीकृष्ण यहाँ आकर उनको मनाते हैं, उनसे प्रेम की याचना करते हैं ।' ऐसा कहकर उन सन्त ने गहराई से मेरी आँखों में देखा और कहा – 'प्रेम भगवान् को जीत लेता है । वे अपनी स्वेच्छा से उस प्रेम से पराजित हो जाते हैं और जब राधारानी हमारी निष्ठा से प्रसन्न होती हैं तो वे भी हमें भगवत्प्रेम का आशीष देती हैं ।' इसके बाद मिट्टी के फर्श को अपनी हथेली से थपथपाते हुए उन्होंने मुझसे कहा – 'आओ, बैठो ।' उत्कृष्ट अंग्रेजी बोलते हुए उन्होंने अपना नाम बताया 'राधाचरणदास' और यह भी कहा कि लोग मुझे रमेश बाबा कहते हैं । ये वही साधु थे, जिन्हें मैं खोज रहा था । कुछ देर बात करने के पश्चात् हम बाहर चले आये । सूरज अस्त हो रहा था और पहाड़ों एवं घाटियों के ऊपर लालिमायुक्त आकाश सुनहरी आभा से चमक रहा था ।

आकाश में तारे छिटकने लगे और हवा में ठण्डक भर गयी । उसी समय निकट के गाँव से लगभग दस-बारह बच्चे मानगढ़ में आ गये । जब रमेश बाबा महाराज हारमोनियम पर शास्त्रीय रागों पर भजन गाने लगे तो तो उन बच्चों ने उन्हें घेर लिया । बाबा के मुख खोलते ही दैवी स्वर प्रवाहित होने लगे । छोटे बच्चे भी उनके साथ सुर मिलाने लगे और जब संगीत की गति तीव्र हुई तो बाबा खड़े हो गये तथा उन्मुक्त होकर नृत्य करने लगे । एक बालक दो छड़ियों से ढोल को बजाने लगा, दूसरा लकड़ी के हत्थे से घंटा बजाने लगा और अन्य बच्चे करताल से ताल देने लगे । तारों से जगमगाते आकाश के नीचे उस निर्जन शिखर पर उच्च स्वर से भगवान् का कीर्तन करते हुए वे नृत्य कर रहे थे । जब उनका उत्साह उत्कर्ष पर पहुँचा तब बाबाजी अपने आसन से उठे और मग्न होकर सौम्य शैली में नृत्य करने लगे । जब कीर्तन अपनी चरम सीमा पर पहुँचा तो बाबा बैठ गये और उन्होंने मध्यम गति से अन्तःकरण को झकझोरने वाला एक राग गाया, जो एक अभिभूत करती शान्ति में समाप्त हो गया ।

उस पर्वत पर रहने वाले एकमात्र अन्य व्यक्ति सखीशरण बाबा ने मुझे बाबा महाराज के अतीत के विषय में बताया । बाबा का जन्म कुम्भ मेले की धरती प्रयाग में हुआ था । बचपन में उन्होंने संस्कृत और दर्शन शास्त्र के अध्ययन में विशिष्टता प्राप्त की थी । बारह वर्ष की अवस्था में उनकी सुरीली वाणी ने अखिल भारतीय संगीत प्रतियोगिता में उन्हें राष्ट्रीय पुरस्कार अर्जित करवाया था । एक उज्जवल भविष्य होने की अपेक्षा एक आध्यात्मिक उत्कण्ठा ने उन्हें घर से भागकर साधु बनने के लिए प्रेरित किया लेकिन वे जब भी घर से भागते, परिवार के सदस्य उन्हें पकड़कर पुनः घर ले आते । किशोरावस्था में ही वे इतने प्रबल विद्वान् और प्रचारक बन गये कि उनका व्याख्यान सुनने के लिए हजारों लोग उमड़ पड़ते परन्तु उन सबको त्यागकर वे बरसाने के इस निर्जन स्थान पर रहने के लिए आ गये ।

एक दिन जब हम लालटेन के टिमटिमाते हुए प्रकाश में बैठे थे तो मैंने बाबा महाराज से पूछा कि क्यों उन्होंने एक वक्ता के रूप में अपने सफल पेशे को छोड़ दिया था ? अरुचि से मुँह बनाते हुए उन्होंने आँखें ऊपर कर ली थी । बाबा को अपने विषय में चर्चा करना अच्छा नहीं लगता था । उन्होंने कहा – 'चूँकि तुमने पूछा है, इसलिए उत्तर देना मेरा कर्त्तव्य है । हजारों अनुयायी मेरा प्रवचन सुनने के लिए आते थे किन्तु मेरा हृदय श्रीराधा के प्रेम का अभिलाषी था । उन्होंने ही मुझे यहाँ बुला लिया । इसलिए मैं प्रचारक के रूप में अपने बढ़ते यश को त्यागकर वृन्दावन आ गया, जहाँ गोवर्धन में मुझे अपने गुरु मिले, फिर मैं बरसाना आ गया । ये १९५३-५४ की बातें हैं । तब मैं १६-१७ वर्ष का था । उस समय यह स्थान जंगली पशुओं से भरा एक जंगल था और यह पर्वत शिखर (मानगढ़) चोर और हत्यारों के छिपने का गढ़ था । तब से मैं यहीं रहकर श्रीराधारानी की आराधना कर रहा हूँ ।'

इन वर्षों में बाबा महाराज वृन्दावन क्षेत्र के सर्वाधिक आदरणीय सन्तों में से एक बन गये । वे अपनी विधवा माँ के एकमात्र पुत्र थे, जो बाद में अपने पुत्र के साथ रहने के लिए गह्वर वन में बनी एक कुटिया में आकर बस गयीं । उन्होंने भी एक वैरागिन साध्वी का सरल जीवन अपना लिया और भगवान् की आराधना में लीन हो गयीं ।

उन दिनों मान मन्दिर में बिजली, पानी, शौच और खाने की व्यवस्था नहीं थी, इसलिए सखीशरणबाबा और मैं पहाड़ से नीचे उतरकर गह्वर वन के कुण्ड राधा सरोवर से बाल्टियों में पानी भरकर ऊपर मन्दिर में लाते थे । वह एक कठिन चढ़ाई थी और सूर्य की तपती धूप में इतनी बोझिल होती कि हमें हर बार कुछ सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद थोड़ा रुककर विश्राम करना पड़ता था । दोपहर को मन्दिर में पानी रखकर हम मानगढ़ की पिछली ओर से नीचे उतरकर मानपुर नामक छोटे से गाँव में भिक्षा माँगने जाते थे और मन्दिर में आकर मिट्टी के फर्श पर बैठे बाबा महाराज के साथ उन्हें बाँटकर खा लेते थे ।

खूँखार अपराधियों के एक स्थानीय गिरोह को कुछ ऐसे लोगों ने उकसा दिया था, जो बाबा महाराज के बढ़ते यश और उनके द्वारा भगवन्नाम के उच्च स्वर में संकीर्तन से घृणा करते थे । एक बार शान्त रात को जब मैं मानगढ़ की छत पर बाबा के साथ बैठा था, मुझे बन्दूक और चाकू लिए कुछ लोग पहाड़ पर चढ़ते हुए दिखायी दिए । वे सीधे हम तक आ गये । क्रूर दृष्टि के साथ उन्होंने हमें देखा और स्पष्ट कर दिया कि वे हमारी गर्दन काटने के लिए तैयार हैं । उनका मुखिया

घिनौना, भद्दा, विशालकाय, शक्तिशाली और हिंसक था । उसने सिर पर एक काला कपड़ा बाँधा हुआ था और उसकी घनी मूँछें व सड़े हुए दाँत थे । वह बाबा के सामने चिल्लाया – 'इस इलाके में हमारा कानून चलता है । यह कीर्तन-वीर्तन बन्द करो, नहीं तो मारे जाओगे । तुम्हें उड़ाना हमारे लिए एक मच्छर मसलने जैसा है ।' बाबा उनकी धमकी सुनकर भी अप्रभावित हो शान्ति से बैठे रहे । कुछ समय पश्चात् वे गुण्डे चले गये । एक अन्य रात्रि को निकट के गाँव से आये बाबा के एक अनुयायी ने बताया कि उसके परिवार को जान से मारने की धमकी मिल रही थी । श्रीबाबा इन सब घटनाओं से विचलित नहीं हुए । उन्होंने मुझसे कहा – 'मैं सन्त- महापुरुषों और शास्त्रों के आधार पर भगवान् के नामों का कीर्तन कर रहा हूँ । यदि भगवान् मुझसे प्रसन्न हैं तो चाहे ये लोग कुछ भी करें, मुझे अन्तर नहीं पड़ता ।' बाबा निर्भीक होकर कीर्तन करते रहे । मैं समझ गया कि मुझे भी ऐसा दृढ़ विश्वास विकसित करना होगा, तभी मैं अपने हृदय को सुपात्र बनाकर वह स्वीकार कर पाऊँगा, जिसके लिए मैं निरन्तर प्रार्थना कर रहा था । हाँ, श्रीबाबा के पास एक आदर्श था, जिसके लिए वे जीने और मर-मिटने के लिए तैयार थे ।

मानगढ़ में सितारों के प्रकाश में हम मन्दिर के बाहर एक सीमेंट के चबूतरे पर सोते थे । एक रात मैंने देखा कि बाबा अपने पास तीन फुट की एक लकड़ी रखकर लेटे थे । यह देखकर उत्सुकता से मैं उठ बैठा और उनसे पूछा – 'बाबा ! मैंने कभी भी आपको छड़ी के साथ सोते नहीं देखा । क्या आज इसका कुछ विशेष कारण है ?' शान्त स्वर में उन्होंने उत्तर दिया – 'हाँ, गाँव वालों ने समाचार दिया है कि इस क्षेत्र में एक आदमखोर चीता घूम रहा है । उसने पहले ही कुछ गायों और गाँव वालों की हत्या कर दी है । आज शाम वह चीता हमारे पर्वत पर चढ़ता देखा गया है । मैं यह छड़ी सुरक्षा के लिए रख रहा हूँ ।' बाबा ने इतनी बेफिक्री से कहा मानो कोई मौसम की चर्चा कर रहा हो । उनकी बात सुनकर आश्चर्यचकित होकर मैंने पूछा – 'किन्तु एक जंगली चीते से बचाने के लिए यह छोटी सी छड़ी क्या करेगी ?' 'कुछ नहीं कृष्ण दास, केवल भगवान् ही हमारी रक्षा कर सकते हैं ।' उन्होंने गहरी साँस ली, आँखें मूँदीं और सुस्ताते हुए अपने विचारों को व्यक्त किया । 'लेकिन हमारा कर्तव्य है श्रीकृष्ण को यह दिखाना कि हम अपना कर्म कर रहे हैं ।' उनके विश्वास से प्रोत्साहित होकर उस रात को मैं अच्छी नींद सोया और वास्तव में भगवान् ने हमारी रक्षा की ।

मैं अनेक अवसरों पर बाबा महाराज के पास रहा । गर्मियों में मान मन्दिर का पर्वतशिखर दहकता था । कभी-कभी तापमान ४६ डिग्री सेल्सियस तक चला जाता था और सर्दियाँ भी इतनी ही कठोर होतीं, कभी-कभी तापमान शून्य तक पहुँच जाता । मौसम के प्रकोप के बावजूद भी बाबा के पास न तो गर्मियों में शीतलता प्रदान करने के लिए पंखा था और न ही सर्दियों में गरमाहट के लिए हीटर, फिर भी वे शान्तिपूर्वक कीर्तन करते हुए दिन-रात राधा-कृष्ण के ध्यान में डूबे रहते । उन्हें मृत्यु से कोई भय नहीं लगता था, उनके विपरीत मैं अभी भी मृत्यु से डरता था ।

प्रत्येक रात्रि श्रीबाबा और मैं मिट्टी के फर्श पर बैठकर भिक्षा में मिली रोटियाँ मिल-बाँटकर खाते थे । लालटेन के प्रकाश में उनकी देह टिमटिमाती हुई लगती थी । एक रात उन्होंने मुझसे पूछा – 'तुम अमेरिका के किस प्रदेश में पले-बड़े हो ?' मैंने उत्तर दिया – 'शिकागो के निकट एक छोटे कस्बे में ।' मेरी बात सुनकर बाबा ने प्रसाद पाना बन्द किया और उनकी आँखें करुणा भरे आँसुओं से भर आयीं । उन्होंने दुःख के साथ कहा – 'ओह, कृष्णदास ! शिकागो में बहुत गायों की हत्या होती है ।' गहरी साँस लेते हुए मैंने अपनी आँखें बन्द कर लीं । बचपन में जब हम कार से शिकागो के पशुओं के बाड़े के सामने से जाते थे तो वहाँ से बहुत दुर्गन्ध और चीखें आती थीं । उनका स्मरण करके मैं दुखी हो उठा । बाबा महाराज उस निर्जन पर्वत शिखर पर एकान्त में रहते थे और दशकों से विश्व समाचार से अनभिज्ञ थे किन्तु उन्हें इसका ज्ञान कैसे था ? किन्तु यह सत्य था । पहले शिकागो के दक्षिणी भाग यूनियन स्टॉकयार्ड में विश्व का सबसे बड़ा कसाईघर था और अमेरिका के अधिकतर माँस की पूर्ति वहीं से होती थी । दस हजार मील दूर बैठी गायों के प्रति बाबा की करुणा देखकर मेरा हृदय द्रवित हो उठा ।

अनुकम्पा और करुणा में क्या अन्तर है ? ये भी समझना चाहिये । करुणा के बाद श्रीजी का हृदय काँप गया, बहुत द्रवित हो गया, उसे अनुकम्पा कहते हैं । करुणा के बाद राधारानी रह नहीं पातीं और अनुकम्पा के बाद आदेश देती हैं – जाओ सखियो ! मेरे उस भक्त की सुधि लो ।

रमेश बाबा मेरे आजीवन मित्र और प्रेरणा के महान स्त्रोत बन गये । जनसमुदाय के मत की परवाह किये बिना वे उन्हीं आदर्शों का पालन और प्रचार करते, जिन पर उन्हें विश्वास था । मैं यह देखकर आकर्षित हुआ कि वे वृन्दावन छोड़े बिना ही वैसी ही परिस्थितियों में रहते थे जैसे हिमालय के साधु और योगी । वे एक कठोर तपस्वी और प्रकाण्ड विद्वान् हैं, जिन्होंने अपना जीवन भिक्षाटन करने एवं राधाकृष्ण के मधुर प्रेम का माध्यम बनने की याचना में बिताया था । जब भी वे गाते और सेवा करते, वह प्रेम स्पष्टता से दिखायी देता । उनके आदर्श जीवन को देखकर मैंने विचार किया, हाँ, भक्ति का मार्ग अत्यन्त गहन है, जो ऐसे ब्रजनिष्ठ संतों की कृपा से ही सुगम होता है ।

श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी के दर्शन-स्पर्श का प्रभाव

इतिहास में ऐसी बहुत सी घटनाएँ हुई हैं कि बड़े-बड़े महापुरुषों के सत्संग से महान पापी भी एक क्षण में पुण्यात्मा बन गया । एक बार चैतन्य महाप्रभु दक्षिण भारत गये थे । उनके साथ कृष्ण दास सेवक भी था । जगाई-मधाई का नाम तो सभी जानते हैं, उन्होंने तो फिर भी नित्यानन्द महाप्रभु के मुख से हरि नाम सुना, उनकी कृपा हुई, फिर इनका उद्धार हुआ किन्तु यह एक विचित्र घटना है कि चैतन्य महाप्रभु दक्षिण भारत गये तो वहाँ एक शिव जी का मन्दिर जंगल में था, वे उस मन्दिर में रुक गये । जो कुछ मिल जाता था, सेवक रख देता, वे खा लेते थे, नहीं तो कृष्ण प्रेम में डूबे रहते थे । जंगल में शिव मन्दिर में एकान्त में पड़े हुए वे बड़े ही सुन्दर स्वर से कृष्ण नाम कीर्तन कर रहे थे । कृष्ण दास भी उनके पास बैठकर उस कीर्तन को सुन रहा था । महाप्रभु के मुख से कृष्ण विरह में जो चीत्कार निकलती थी, उससे सारा वन गूँज रहा था – हा कृष्ण ! हा कृष्ण ! । उस जंगल में एक बहुत ही धनी सेठ, जिसका नाम तीर्थ राम था, दो वेश्याओं के साथ घूमने के लिए गया था । उन वेश्याओं में एक का नाम सत्या और दूसरी का नाम लक्ष्मी था । वे बहुत बड़ी सुंदरी थीं । सेठ तीर्थराम उनको लेकर जंगल में विहार करने के लिए गया था । यह अध्यात्म शक्ति की बात है कि जो व्यक्ति नितान्त भोगी है, जिसने जीवन भर भोग भोगा, पाप किया, वह जब वन में गया तो उसे शिवालय से कृष्ण नाम कीर्तन की आवाज सुनायी दी । महाप्रभु कीर्तन कर रहे थे – **'हरे हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः ।'** उन हरि कृष्ण को नमस्कार है, यादव कृष्ण को नमस्कार है । **'गोपाल गोविन्द राम श्री मधुसूदन ॥'** रात का समय था । इस कीर्तन की ध्वनि सारे वन में गूँज रही थी । **'यादवाय माधवाय केशवाय नमः । गिरिधारी गोपीनाथ मदनमोहन ॥'** इस कीर्तन की आवाज सेठ तीर्थराम के पास पहुँची, जिसके साथ दो वेश्यायें थीं, जो बहुत ही सुन्दर थीं । उनको अपने रूप का बड़ा ही गर्व था । कीर्तन की आवाज सुनकर तीर्थराम शिवालय में गया । वहाँ उसने एक बड़ा ही सुन्दर नवयुवक देखा । महाप्रभु का रूप बड़ा ही सुन्दर था । तीर्थराम ने उनको देखकर आश्चर्य प्रकट किया कि इतना सुन्दर युवक ये क्या कर रहा है, कृष्ण-कृष्ण कह रहा है । उसने महाप्रभु के पास जाकर उनसे पूछा – 'अरे युवक ! तुम कौन हो ?' जिस पर कृपा हो जाती है, वह सन्तों के पास पहुँच जाता है । उस पर कृष्ण की कृपा हुई तो वह कृष्ण चैतन्य रूपी अग्नि कुण्ड के पास पहुँच गया, जहाँ सभी पाप एक क्षण में जल जायेंगे । महाप्रभु जी ने उसको देखा तो पूछा – 'क्या बात है ?' तीर्थराम बोला – 'तुम कौन हो ?' महाप्रभु ने उत्तर दिया – 'मैं सन्यासी हूँ ।' तीर्थराम बोला – 'यह तो मैं भी देख रहा हूँ कि तुम सन्यासी हो लेकिन इस जंगल में क्या कर रहे हो ?' महाप्रभु ने सहज भाव में कहा कि मैं अपने प्रियतम को खोज रहा हूँ । तीर्थराम को बड़ा आश्चर्य हुआ । वह सोचने लगा कि यह कह रहा है कि मैं प्रियतम को खोज रहा हूँ बल्कि कहना

चाहिए था कि प्रियतमा को खोज रहा हूँ । यह इतना जवान आदमी है और जवान आदमी का प्रेम तो किसी प्रियतमा से होगा और यह क्या कहता है कि मैं अपने प्रियतम को खोज रहा हूँ । महाप्रभु फिर से कृष्ण-कृष्ण कहने लगे और अपने प्रेम की मस्ती में डूब गये । तीर्थराम अपने साथ की वेश्याओं के पास जाकर बोला कि यह कैसा युवक है जो कृष्ण-कृष्ण कह रहा है और कहता है कि मैं अपने प्रियतम को खोज रहा हूँ । वे वेश्यायें महाप्रभु की निन्दा करते हुए बोलीं – 'तुम्हें पता है कि ये सन्यासी क्यों बना है ?' तीर्थराम ने पूछा – 'क्यों बना है ?' वेश्यायें बोलीं – 'जो स्त्रियों की बहुत निन्दा करता है, उसको कामदेव भिखारी बना देता है और कहता है कि जाओ, तुम भीख माँगो । तुमको यही दण्ड मिलेगा । कामदेव ने भी इस युवक को भिखारी बना दिया है । अब यह तड़पता रहेगा । इसने हम स्त्रियों की निन्दा की थी, उसी का यह दण्ड है ।' तीर्थराम को वेश्याओं की यह बात ठीक नहीं लगी क्योंकि उसे चैतन्य महाप्रभु में उसे सच्चा प्रेम दिखाई दिया था । एक होता है सच्चा प्रेम और एक होता है नकली प्रेम । जैसे हम लोगों का नकली प्रेम है, आँसू नहीं आते हैं, थोड़ा बहुत आँसू आता भी है तो आँखों को भींचकर उसे लोगों को दिखाते हैं कि सब लोग देख लें कि मेरी आँखों में आँसू आ रहे हैं और समझें कि यह बड़ा प्रेमी है । तीर्थराम ने महाप्रभु के प्रेम की सच्ची दशा देख ली थी । उन्हें अनुसन्धान नहीं था कि बाहर क्या हो रहा है ? तीर्थराम ने वेश्याओं से कहा कि तुम लोग इसके बारे में जैसा कह रही हो, वह सच नहीं है । कामदेव ने इसको भिखारी नहीं बनाया है । यह तो मुझे सच्चा साधु प्रतीत होता है । वेश्यायें बोलीं – 'नहीं-नहीं, कामदेव ने इसको दण्ड दिया है और भिखमंगा बना दिया है ।' तीर्थराम बोला – 'यदि ऐसी बात है, यदि यह झूठा साधु है तो तुम लोग इसके पास जाओ और इसे अपने रूप से मोहित करो ।' वेश्यायें बोलीं – 'हाँ, अभी इसको हमारे जैसी सुन्दरी मिली नहीं हैं, यदि मिल जाएँ तब तो यह पीछे-पीछे घूमेगा ।' तीर्थराम ने कहा – 'तुम लोग इसके पास जाओ, मुझे तो इसका मोहित होना कठिन मालूम पड़ता है क्योंकि इसके प्रेम की मस्ती कुछ अलग ही है ।' वेश्यायें बोलीं – 'अरे कुछ नहीं है । अभी हम लोग इसके पास जाती हैं और फिर यह हमारे पीछे-पीछे घूमेगा ।' ऐसा कहकर वे वेश्यायें बड़ी अदा के साथ मुस्कुराती हुई महाप्रभु के पास पहुँचीं । पहले तो वे उनके पास जाकर खड़ी हो गयीं और अपने पैरों के घुंघरू बजाने लगीं ताकि वे देखें क्योंकि महाप्रभु तो अपने प्रेम की मस्ती में डूबे हुए थे । वेश्यायें अपने आभूषणों की झनकार करती रहीं किन्तु महाप्रभु के ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । अन्त में वे महाप्रभु के पास बैठ गयीं, फिर भी वे तो कृष्ण नाम का कीर्तन करते रहे । अब तो इन वेश्याओं ने महाप्रभु के शरीर को पकड़कर झकझोरा । जिसने भी एक बार उस गौर शरीर को छुआ, उसके तो सभी पाप उसी समय नष्ट हो जाते थे । इन वेश्याओं के ऊपर भी कृपा होनी थी । जब उन्होंने गौरांग के शरीर को झकझोरा तो उन्होंने अपनी आँखें खोलीं और देखा कि सामने दो परम रूपवती युवतियाँ सामने बैठी हैं, जो बड़े प्रेम से देख रही हैं, मुस्कुरा रही हैं । उनको देखते ही महाप्रभु ने हाथ जोड़कर कहा – 'माँ ! इस बालक के लिए क्या आज्ञा है ?' महाप्रभु ने जो 'माँ' शब्द कहा, उस शब्द में ऐसा जादू था कि उन वेश्याओं के मन में जो विकार थे कि हम लोग इस सन्यासी को वश में कर लेंगी, यह बड़ा ही जवान है, बड़ा सुन्दर है । वह सारा विकार एक क्षण में चला गया । ये है अध्यात्म शक्ति । उनको सारे जीवन भोग का संस्कार था क्योंकि भोगी मनुष्य दिन-रात मल-मूत्र के पिण्ड इस शरीर को ही भोगने में लगा रहता है । उसको कभी भी यह दिखाई नहीं देता कि यह शरीर मल-मूत्र से भरा है । वह तो मल-मूत्र की हंडी को ही अमृत का कुण्ड समझता है । भोगी व्यक्ति जीवन भर इसी अन्धकार में डूबा रहता है, उसे इस शरीर की वास्तविकता का कभी पता ही नहीं पड़ता है । वह इसी अन्धकार में मर जाता है लेकिन कभी उसको शरीर की सच्चाई का पता नहीं पड़ता । यह कैसी विचित्र माया है । भगवान् कृष्ण ने श्रीमद्भागवत में उद्धवजी को उपदेश देते हुए कहा है कि यह कैसी विचित्र माया है ? उन्होंने उद्धव को अपने पूर्वज ऐल (पुरूरवा) की दशा सुनायी । भगवान् ने कहा कि कैसा विचित्र खेल है ? मनुष्य का शरीर क्या है - त्वचा है, उसके भीतर माँस है, उसके भीतर खून है, उस खून में स्नायु अर्थात् सूक्ष्म नाड़ियाँ हैं, उसके भीतर मेद, मज्जा और अस्थि है । उसके भीतर केवल मल और मूत्र है । उस मल-मूत्र के भीतर जीवाणु-कीटाणु, पीब आदि बहुत सी गंदगियाँ हैं । इनके अलावा और कुछ

नहीं है । यही है इस शरीर का सच्चा रूप लेकिन मनुष्य इसमें इस तरह से रमता है जैसे मल के कीड़े को मल में कोई गन्दगी नहीं दिखाई देती है । मल के कीड़े मल में ही जीते हैं, मल में ही रमते हैं, उनके लिए मल ही सब कुछ है । इसी तरह मनुष्य भी बन जाता है । बूढ़ा हो जाता है, इन्द्रियाँ कमजोर हो जाती हैं, फिर भी वह टेलीविजन पर फिल्म अभिनेत्रियों के अश्लील नृत्य को देखता है, उन गन्दे नाच-गाने से मरते दम तक भी उसको वैराग्य नहीं होता है । भगवान् कृष्ण ने कहा कि जैसे मल के कीड़ों को कभी उससे वैराग्य नहीं होता है, उसी तरह मनुष्य है । उन कीड़ों और मनुष्य में क्या अन्तर है, कोई अन्तर नहीं है । पेशाब के भीतर भी बड़े सूक्ष्म कीड़े होते हैं । डॉक्टर के पास जाओ तो stool test, urine test (मल-मूत्र की जाँच) होता है । डॉक्टर कहता है कि आपकी पेशाब में इतने कीड़े हैं । उन कीड़ों को मूत्र ही अमृत कुण्ड लगता है । भगवान् कृष्ण ने कहा कि इसी प्रकार भोगियों और मल-मूत्र के कीड़ों में क्या अन्तर है, कोई अन्तर नहीं है । केवल आकार का अन्तर है कि हमारा शरीर पाँच-छः फिट का है, बाकी तो हम लोगों में और उन कीड़ों में कोई अन्तर नहीं है । इस तरह से मनुष्य को जीवन भर सच्चाई का पता नहीं लगता है । वह सत्संग में भी जाता है, वहाँ सुनता भी है, समझता भी है लेकिन यह तो महाप्रभु जी की आध्यात्मिक शक्ति थी कि उन्होंने 'माँ' शब्द कहा और उनके एक बार के ही कहे गये इस शब्द से उन वेश्याओं के सभी अशुभ संस्कार जल गये । जब महाप्रभु ने वेश्याओं से कहा – 'माँ ! इस बालक के लिए क्या आज्ञा है ?' कृष्ण कहकर वे रोने लगे । उनके आँसू और उनका प्रेम देखकर वे दोनों वेश्यायें महाप्रभु के चरणों में गिर पड़ीं और बोलीं – 'स्वामी ! हमारे ऊपर कृपा करो ।' जो वेश्याएँ अभी थोड़ी देर पहले महाप्रभु की बुराई कर रही थीं कि कामदेव ने इसको भिखारी बना दिया है, इसको दण्ड दिया है और अब यह जीवन भर तड़पेगा, भीख माँगेगा । वे ही अब महाप्रभु के चरणों में गिरकर रोने लगीं तो सेठ तीर्थराम भी महाप्रभु के चरणों में गिरकर रोने लगा और बोला कि आप हम तीनों का कल्याण कीजिये । आप सच्चे सन्त हैं । महाप्रभु ने उससे कहा कि तुम कृष्ण गुण गाओ । इसके बाद महाप्रभु ने तीर्थराम के द्वारा ही उन स्त्रियों को 'श्रीकृष्ण' नाम की दीक्षा दिलवायी और कहा कि स्त्री को पति से ही दीक्षा लेनी चाहिए । जाओ, अब तुम लोग शुद्ध आचरण करना । इसके बाद वे तीनों ही शुद्ध भक्त बन गये । इस प्रकार की बहुत-सी घटनायें हुई हैं । यह क्या है ? यह अध्यात्म शक्ति है; जहाँ भी विशुद्ध प्रेमरूपिणी भक्ति की शक्ति होगी, वहीं पर इस शक्ति का सहज ही उदय हो जाता है ।

विरक्त शिरोमणि 'श्रीरघुजीमहाराज'

बाबाश्री के सत्संग 'श्रीराधासुधानिधि' (११/२/२००३) से संकलित

प्रेमोदय के पहले भावोदय होता है और भावोदय जब होता है तो वह प्रेम की पूर्व अवस्था होती है । वही पककर प्रेम हो जाता है । भाव में जो स्थितियाँ होती हैं, उसका वर्णन हो रहा है – 'क्षान्तिरव्यर्थकालत्वं विरक्तिर्मानशून्यता' । किसी भी दशा में क्षोभ नहीं होना, चाहे जन्म हो, मृत्यु हो, भयानक से भयानक स्थिति हो । ऐसा कैसे हो सकता है ? ऐसा भाव शक्ति से होता है । भाव शक्ति जब आ जाती है । भाव एक चिद् वस्तु है । भाव शक्ति के कारण जीव में ऐसी बातें आ जाती हैं कि वह कभी भी क्षुब्ध नहीं होता है । यही लक्षण है भाव का । सामान्य जीवों तथा उसमें यही अन्तर होता है । साधारण जीवों के लिए तो यह कठिन ही नहीं, असम्भव है लेकिन जिसके अन्दर भावोदय हुआ है, उसकी चर्चा हो रही है । सामान्य जीव को यदि कहा जाए कि किसी भी स्थिति में तुम क्षुब्ध मत हो तो वह बहस करेगा, तर्क करेगा । वह कहता है कि ऐसा कैसे हो सकता है ? ऐसा कौन मनुष्य है, जो क्षोभ को नहीं प्राप्त हो । समझाने पर प्रायः बहुत से लोग तर्क करने लग जाते हैं । जैसे किसी का अपमान हुआ, वह क्षुब्ध है, ऐसी दशा में उससे कहो कि तुम क्षोभ नहीं करो तो वह तुरन्त जवाब देगा कि आपका अपमान हो तब पता पड़ेगा । आपके ऊपर बीतेगी तब पता पड़ेगा । ऐसा इसलिए है क्योंकि वह बेचारा उस स्थिति को समझ नहीं सकता और अपनी ही दृष्टि से देखता है । जिसकी जैसी

दृष्टि होती है, वह उसी के अनुसार सोचता है परन्तु यह स्थिति होती है । इसके अनेक प्रमाण हैं जैसे भीष्म आदि के तथा अन्य भी बहुत से भक्तों जैसे प्रह्लाद, वृत्रासुर आदि के चरित्र हैं । ऐसे एक-दो नहीं अगणित भक्त हुए हैं । हमारी स्थिति ऐसी नहीं है, इसलिए हम विश्वास नहीं करते हैं । क्षोभ नहीं प्राप्त हो, केवल भयानक स्थिति की ही बात नहीं है, मन में किसी भी प्रकार का क्षोभ नहीं होना चाहिए जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह,भय आदि का । श्रीचैतन्य महाप्रभु के परिकर, उनके परम कृपापात्र नामाचार्य श्रीहरिदासजी यवन थे । उनके सामने एक विश्व सुन्दरी आयी परन्तु वह उनके मन को क्षुब्ध नहीं कर पायी, उनके मन में विकार उत्पन्न नहीं कर सकी । इस तरह की बातें एक साधारण व्यक्ति के लिए तो असम्भव ही है । वह विश्व सुंदरी, एक वेश्या तो हरिदास जी को विचलित करने के लिए ही आई थी । उसने उनके सामने भद्दा से भद्दा प्रदर्शन किया । स्पष्ट रूप से उसने रति की याचना की, जबकि ऐसा होता नहीं है । उस सर्व सुन्दरी वेश्या को हरिदास जी को भ्रष्ट करने के लिए भेजा गया था । उसके रूप को देखकर लोग तरसा करते थे किन्तु लड़ाई विचित्र थी । हरिदास जी यदि चाहते तो पहले ही दिन चाँटा लगाकर उसे भगा देते लेकिन लड़ाई इस बात की थी कि वेश्या चाहती थी कि हरिदास मेरे रंग में रंग जायें, काम भाव से ग्रसित हो जाएँ और हरिदासजी चाहते थे कि यह वेश्या कृष्ण भाव में रंग जाए । इन दोनों की ही लड़ाई थी । हरिदासजी चाहते थे कि जो जीव मेरे पास आया है वह कृष्ण प्रेम में रंग जाए । यही महापुरुषों का लक्ष्य होता है । वे चाहते हैं कि किसी भाव से उनके पास आया हुआ जीव कृष्ण प्रेम में रंग जाए । इसीलिए हरिदासजी ने उस वेश्या को चाँटा मारकर नहीं भगाया । वे उससे बार-बार यही कहते रहे कि अभी तुम बैठी रहो, जब मेरा नाम जप पूरा हो जाएगा, तब मैं तुमसे मिलूँगा, तुमसे बात करूँगा और तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा । झूठ बोलना, झूठा आश्वासन (भरोसा) देना – यह बिलकुल मिथ्या व्यवहार है । एक तरह से यह धोखा देना है । हमें जो क्रिया नहीं करनी है, उसके लिए किसी से हाँ करना, छल करना ही है लेकिन जो महापुरुष होते हैं, वे ऐसा लक्ष्य रखते हैं, जिससे किसी भी प्रकार जीव का कल्याण हो । इसके अतिरिक्त उनका कोई और दूसरा लक्ष्य नहीं होता है । उसी को महापुरुष कहा गया है । अस्तु, वेश्या हरिदासजी के पास आशा में बैठी रही । सर्वसुन्दरी होने के कारण वह आश्चर्य भी कर रही थी कि मेरे रूप के लिए लोग तरसते हैं और ये मेरी ओर ध्यान नहीं दे रहे हैं । हरिदासजी उस समय वृद्ध नहीं थे, सुन्दर युवक थे । रात भर वेश्या बैठी रही, सुबह हो गया । सबेरा होने पर हरिदास जी ने उससे कहा कि अभी मेरा जप बाकी रह गया है । इसको पूरा किये बिना मैं तुमसे नहीं मिल सकता । आज रात को जप पूरा हो जायेगा । वेश्या चली गयी और शाम को फिर से खूब श्रृंगार करके आयी और हरिदासजी के सामने उनसे मिलने के लिए उसने अपने हाव-भाव प्रदर्शित किये । हरिदासजी ने उसको अपनी माला दिखा दी और कहा कि अभी मेरा जप बाकी है । इसके बाद मैं तुमसे मिलूँगा । झूठ बोल दिया । झूठ इसलिए बोले क्योंकि उनको विश्वास था कि भगवन्नाम के प्रभाव से यह वेश्या शुद्ध हो जायेगी । नहीं तो वे उसको एक चाँटा मारकर भगा सकते थे किन्तु उनका लक्ष्य उसे भगाना नहीं था, उसका सुधार करना उनका लक्ष्य था । वेश्या पुनः उनसे मिलने की आशा में सारी रात बैठी रही । हरिदासजी भगवन्नाम बड़े आवेश से लेते थे । महापुरुषों के द्वारा भगवन्नाम लेने में और हम लोगों के नाम लेने में अन्तर होता है । कीर्तन तो हम जैसे लोग भी करते हैं किन्तु महापुरुषों के कीर्तन में एक विशेषता होती है । हम जैसे लोग नाम को नामाभास बना देते हैं और सच्चे महापुरुषों के मुख से शुद्ध नाम का उच्चारण होता है । कथा हम जैसे लोग भी कहते हैं किन्तु महापुरुष लोग जो कथा कहते हैं, उसमें एक अलग शक्ति होती है, वह साक्षात् हृदय पर जाती है, मोह भंग करती है । दूसरी रात भी वेश्या आशा में बैठी रही कि आज ये मुझसे मिलेंगे । सबेरा होने पर हरिदासजी ने कहा कि अभी मेरा नियम रह गया है । आज रात को पूरा हो जायेगा । अगले दिन शाम को वेश्या पुनः आयी । उस दिन भी उन्होंने जोर-जोर से भगवन्नाम लेना आरम्भ किया । सबेरा होते-होते वेश्या का अन्तःकरण शुद्ध हो गया क्योंकि उसने लगातार तीन रात तक भगवन्नाम श्रवण किया था । वह हरिदासजी के चरणों में गिर पड़ी और बोली – 'आपने मेरा उद्धार कर दिया । मैं तो आपको गिराने के लिए आयी थी । आप तो मेरे गुरु हैं । मुझे शिक्षा दीजिये ।' हरिदासजी ने उसे शिक्षा दी और उसको पूर्ण रूप से शुद्ध

कर दिया, भगवान् से मिला दिया । यह क्षान्ति का उदाहरण है । सच्चे भक्तों का उदाहरण है, जिनके हृदय में क्षोभ नहीं उत्पन्न होता है । क्षोभ माने केवल क्रोध या लड़ाई-झगड़ा ही नहीं होता है । काम भी तो क्षोभ पैदा करता है । काम जन्य क्षोभ, क्रोध जन्य क्षोभ, लोभ जन्य क्षोभ और मोह जन्य क्षोभ होते हैं । भय का क्षोभ तो सभी को होता है । किसी भी प्रकार का क्षोभ न होना ही क्षान्ति है । क्षोभ का मतलब केवल यही नहीं है कि किसी ने आपको गाली दी और आप हँसने लगे । ऐसा तो नाटक में भी हो सकता है और प्रायः ऐसा हुआ करता है । बड़े-बड़े जितने भी नेता होते हैं, वे महाधूर्त होते हैं । उनको जब सभा में कोई काला झंडा दिखाता है तो मन में वे बड़े क्रोधित होते हैं और सोचते हैं कि जब मैं चुनाव में जीत जाऊँगा, तब तुमको देखूँगा, तुम्हारा घर फुंकवा दूँगा लेकिन ऊपर से कहते हैं – 'अरे, ये हमारे भारतवासी भाई हैं, गाली दे रहे हैं तो क्या हुआ ?' ऐसा कहकर ऊपर से ये नेता इस प्रकार मुस्कुराते हैं कि लगता है जैसे क्षान्ति के ये अवतार हैं । इसलिए नाटक करना अलग होता है । नाटक में अक्षोभ का प्रदर्शन सभी लोग करते हैं । आपको किसी के ऊपर कितना भी क्रोध है, यदि थोड़ा भी विवेक है तो सभा में सबके सामने आप अपना क्षोभ प्रकट नहीं करेंगे । जो एकदम से बेशर्म, मूर्ख है, उसकी बात तो अलग है । कहीं पर प्रसाद बँट रहा है, बहुत बढ़िया बर्फी मिल रही है । आप चाहते हैं कि बड़ी जल्दी यह प्रसाद मेरे पास आ जाये किन्तु ऐसा नहीं होगा कि आप हाथ फैलाकर प्रसाद बाँटने वाले के पीछे-पीछे घूमेंगे । कोई बर्फी प्रसाद देने भी आएगा तो बड़ी मुश्किल से अपना हाथ लेने के लिए आगे करोगे जैसे कितना बड़ा त्याग है । अपनी अक्षोभ की अवस्था तो हर व्यक्ति दिखाता है, बन्दर तक दिखाता है । चार आदमी कहीं भोजन कर रहे हों तो बन्दर थोड़ी दूर बैठ जाएगा और इस तरह नहीं बैठेगा कि खाने वाले की ओर देख रहा हो, इधर-उधर देखता है, कहीं अपना कान खुजलाता है, जम्भाई लेता है और जैसे ही देखता है कि खाने वाले की नजर चूकी तो तुरन्त झपट्टा मारकर खाद्य पदार्थ लेकर भाग जाता है । पहले वह अपने को पूरा त्यागी दिखाता है, इसको मरकट वैराग्य कहते हैं । बन्दर भी अक्षोभ की अवस्था दिखाता है कि मुझे भोजन से कोई मतलब नहीं है । ऐसा नहीं होना चाहिए बल्कि हृदय में ही क्षोभ न हो । ऐसी शक्ति भावोदय के बाद आती है । जो भयानक स्थितियाँ होती हैं, जो मनुष्य को ज्यादा क्षोभ में डाल देती हैं, भयानक से मतलब है, जहाँ मृत्यु सामने हो, ऐसी स्थितियों में भी महापुरुष अक्षुब्ध रहते हैं । भगवान् राम रघु वंश में प्रकट हुए थे – **रघुकुल रीति सदा चलि आई । प्रान जाहुँ बरु बचनु न जाई ॥** (श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड-२८)

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ । मन कुपंथ पगु धरइ न काऊ ॥ (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – २३१)

रामजी भी अपने को रघुवंशी बताते हैं । प्राचीनकाल में एक ऐसा नियम था कि कोई प्रतापी राजा होता था तो उसी के नाम पर वंश का नाम रख दिया जाता था । जैसे सूर्यवंश, इक्ष्वाकु वंश... इसी प्रकार नाम बदलते-बदलते रघुवंश तक नाम बदला । रघुवंश के बाद नाम नहीं बदला । चाहे रामजी भगवान् थे किन्तु वंश के ज्ञाताओं ने उन्हें रघु से अधिक प्रतापी नहीं समझा, इसलिए उस वंश का नाम आगे रामवंश नहीं पड़ा, रघुवंश के बाद भी रघुवंश ही नाम रहा । रघुजी ऐसे प्रतापी राजा थे, जिनके चित्त में कभी क्षोभ उत्पन्न नहीं होता था । उनकी पत्नियाँ स्वर्ग की अप्सराओं से भी अधिक सुन्दर थीं । इतनी सुन्दर स्त्रियों को पाने के बाद भी रघु के मन में कोई आसक्ति जन्य क्षोभ नहीं था । यह एक आश्चर्य की बात थी । अवध में सरयू नदी प्रवाहित होती है तो एक बार रघुजी सरयू नदी में स्नान करने गये थे । उस समय एक वृद्ध ब्राह्मण आया । प्राचीन काल में ब्राह्मणों को राजमहल में जाने की रुकावट नहीं थी । वह ब्राह्मणदेव महल में भोजन की दृष्टि से गये थे । वहाँ महल में रघुजी की अत्यधिक सुन्दर रानियों को देखकर वृद्ध ब्राह्मण के मन में वासना उत्पन्न हो गयी । मन तो बड़ा ही चंचल होता है, जब बिगड़ता है तो यह नहीं सोचता है कि अब शरीर बूढ़ा हो गया है । यह तो मतवाला हाथी है । अब ये ब्राह्मण वृद्ध थे, राजमहल में भोजन करने के लिए गये थे किन्तु सुन्दर रानियों को देखकर आकर्षित हो गये । उन्होंने रानियों से पूछा कि राजा साहब कहाँ हैं ? रानियों ने कहा कि वे तो स्नान करने गये हैं । ब्राह्मण ने रानियों से कहा कि तुम लोग इतनी सुन्दर हो कि तुम्हारी सुन्दरता के सामने अप्सराएँ भी कुछ नहीं हैं । मैं यह जानना चाहता हूँ कि रघु ने तुम लोगों को किस पुण्य से प्राप्त किया ? रानियाँ रघु की आज्ञाकारिणी थीं, ब्राह्मणों के प्रति श्रद्धा

रखती थीं । उन्होंने बताया कि महाराज रघु ने पूर्व जन्म में बहुत बड़ा तप किया था और अपना मस्तक तक शिवजी को चढ़ा दिया था । उसी उपासना के बल से उन्होंने हमें प्राप्त किया । रघु जी के अन्दर इतना प्रताप था, उनकी रानियाँ इतनी सुन्दर थीं कि एक बार रावण भी ब्राह्मण का वेष बनाकर उनके महल में गया था कि मैं छल करूँगा । रघुजी ने पत्नियों को अतिथि सेवा की आज्ञा दे रखी थी कि अतिथि कोई भी हो, भगवान् मानकर उसकी सेवा करना । शरीर, परिवार और राज सिंहासन में रघुजी का कोई मोह नहीं था । जब रावण ब्राह्मण अतिथि के रूप में रघुजी की रानियों के पास गया तो उन्होंने उसका सम्मान करने के लिए उसे अपने पतिदेव के सिंहासन पर बैठा दिया । वह सिंहासन तो रघु महाराज का था, दिव्य आसन था जिस पर वह बैठते थे । उस पर बैठते ही रावण का ब्राह्मण वेष तो गायब हो गया और उसके दस सिर तथा बीस भुजायें प्रकट हो गयीं । असली रूप प्रकट होते ही रावण वहाँ से भाग गया । वह समझ गया कि इस सिंहासन में ही कुछ चमत्कार है । इस सिंहासन पर बैठने से मेरा छल नहीं चल पाया ।

इस कथा के सन्दर्भ में यह विचार करना चाहिए कि महापुरुषों के अन्दर कितनी बड़ी शक्ति होती है । जो रावण कितना बड़ा मायावी था, उसने युद्ध में राम-लक्ष्मण के सामने बड़ी माया प्रकट की थी किन्तु रघु जी के सिंहासन पर बैठने मात्र से उसकी माया चल नहीं पायी और उसको तुरन्त ही वहाँ से भागना पड़ा तथा बाहर आकर उसने फिर से ब्राह्मण का रूप बना लिया । वह सरयू तट पर पहुँचा, जहाँ महाराज रघु स्नान कर रहे थे । वहाँ उसने देखा कि रघुजी संध्या कर रहे थे । संध्या करते-करते रघुजी ने अचानक ही नदी का जल दक्षिण दिशा की ओर फेंका । ब्राह्मण वेष धारी रावण ने रघुजी से पूछा कि आपने यह जल क्यों फेंका ? रघुजी ने बताया कि एक सिंह ने गायों को घेर लिया था तो गायों ने मेरी दुहाई दी थी जबकि मैं वहाँ था नहीं । गायों ने पुकार लगाई – 'महाराज रघु हमारी रक्षा करें ।' इसलिए मैंने गायों की रक्षा के लिए सरयू का जल फेंका तो उस जल ने वहाँ जाकर उस सिंह को मार दिया तथा गायों की रक्षा की । रावण यह सुनकर बड़ा आश्चर्यचकित हुआ और सोचने लगा कि क्या यह सच बात है ? वह उस जंगल में गया तो देखा कि वास्तव में सिंह मरा पड़ा था और गायों की रक्षा हो गयी थी । इधर राजा रघु जब सरयू में स्नान करके अपने महल में पहुँचे तो उनकी रानियों ने कहा कि यहाँ तो रावण आया था । रघुजी ने पूछा कि तुमको कैसे पता चला कि वह रावण था । रानियों ने कहा कि वह ब्राह्मण का रूप बनाकर आया था । हम लोगों ने उसको आपके सिंहासन पर बैठा दिया । सिंहासन पर बैठते ही उसका छल खुल गया तथा उसके दस सिर और भुजायें प्रकट हो गयीं । इसलिए वह भाग गया । रघु ने कहा – 'अच्छा ! रावण हमारे अवध में आया और मेरी उपस्थिति में आया, छल करने आया था ।' उनको रावण से लड़ाई करने की आवश्यकता नहीं पड़ी क्योंकि जिस मनुष्य में सत्य होता है, उसके सामने रावण आदि कुछ नहीं हैं । रघुजी ने अपने महल से ही सात बाण चला दिए । उन्हें लंका नहीं जाना पड़ा । सातों बाणों ने लंका में जाकर विनाश आरम्भ कर दिया । उस समय तक रावण लंका पहुँच भी नहीं पाया था परन्तु मन्दोदरी को ज्ञान हो गया कि मेरे पतिदेव छल करने गये थे, यह उसी का फल है । उस समय पृथ्वी पर महाराज रघु का राज्य चल रहा था । रावण का राज्य बहुत लम्बे समय तक चला । ७२ चौकड़ी तक उसने राज्य किया था । मन्दोदरी ने लंका का विनाश होते देखकर कहा – 'महाराज रघु की दुहाई है, लंका की रक्षा हो जाए ।' मन्दोदरी के इतना कहते ही महाराज रघु के सातों बाण लौट गये । इतना बड़ा प्रताप था रघुजी में । इसीलिए भगवान् राम ने भी बार-बार रघु वंश की प्रशंसा की । रघुजी की रानियों को जब ब्राह्मण ने देखा तो उनसे पूछा कि रघु ने क्या तप किया था, जिसके कारण उनका इतना बड़ा प्रताप है और इतनी सुन्दर रानियाँ हैं कि जिनके सामने अप्सराएँ भी कुछ नहीं हैं । रानियों ने कहा कि यह इस जन्म का पुण्य नहीं है । पूर्व जन्म में इन्होंने शिव आराधना में अपना शरीर और अपने मस्तक तक काटकर शिव जी को समर्पित कर दिए थे ।

आसक्ति को हम समझते हैं कि यह नयी है किन्तु यह नयी नहीं है, ये तो जन्म-जन्म की आदतें हैं । आज कोई साधु बना है तो नया साधु नहीं बना है । कपिल भगवान् ने कहा है –

यदैवमध्यात्मरतः कालेन बहुजन्मना । सर्वत्र जातवैराग्य आब्रह्मभुवनान्मुनिः ॥ (श्रीभागवतजी ३/२७/२७)

हजारों जन्मों तक जब कोई मनुष्य साधन करता है, तब उसके हृदय में वैराग्य उत्पन्न होता है । ऐसा वैराग्य नहीं जैसा कि हम लोग ढोंग करते हैं । वह वैराग्य ऐसा होता है कि ब्रह्म लोक तक की वस्तुओं तक के प्रति आकर्षण न रहे । इसको वैराग्य कहते हैं । ऐसा नहीं कि रबड़ी-मलाई देखकर, बर्फी का थाल देखकर मन डोल जाए । ऐसा वैराग्य एक क्षण में नहीं होता है । इसीलिए रानियों ने राजा रघु का जो साधन बताया कि पूर्व जन्म में इन्होंने भगवान् शिव को अपना मस्तक तक चढ़ा दिया था । उसी का परिणाम है कि इनकी किसी भी वस्तु के प्रति स्पृहा नहीं है, कहीं भी आसक्ति नहीं है । हम जैसी सुन्दर रानियाँ हैं और हम लोग इनकी सेवा को तरसती रहती हैं किन्तु वे अपनी आराधना में लगे रहते हैं । उस ब्राह्मण ने जब यह सुना तो वह सोचने लगा कि अब मैं भी शिव आराधना करूँगा और शिवजी को अपना मस्तक काटकर चढ़ा दूँगा । वह ब्राह्मण मन्त्र ज्ञाता था ही, उसने सोचा कि अब मैं भी शिवजी को अपना सर्वस्व समर्पण कर दूँगा । जब वे लौटे तो उन्होंने महाराज रघु को देखा और रघु ने ब्राह्मण को देखा । ब्राह्मण को देखकर रघु समझ गये कि ये मेरे महल से आ रहे हैं । रघु ने ब्राह्मण से पूछा – 'महाराज ! आप यहाँ कैसे पधारे ?' ब्राह्मण ने कहा कि मैं तुम्हारे महल में गया था । रघु ने पूछा कि क्या आपका वहाँ आतिथ्य-सत्कार नहीं हुआ ? ब्राह्मण ने कहा कि आतिथ्य-सत्कार तो मेरा बहुत बढ़िया हुआ । रघु ने कहा कि लेकिन आप खिन्न मालूम पड़ते हैं । ब्राह्मण ने कहा – 'हाँ राजन् ! मैं खिन्न हूँ ।' रघु ने पूछा – 'आप खिन्न क्यों हैं ?' ब्राह्मण ने कहा – 'तुम्हारी रानियाँ बड़ी सुन्दर हैं । मैं उनसे पूछा कि रघु को तुम जैसी रूपवती रानियाँ मिलीं, इसका कारण क्या है तो उन्होंने बताया कि हमारे पतिदेव ने पूर्व जन्म में शिव जी की आराधना की, कठोर तप किया और शिव जी को अपना मस्तक तक काटकर चढ़ा दिया था । इसलिए अब मैं भी तप करूँगा और शिवजी को अपना मस्तक अर्पित कर दूँगा ।' रघु ने कहा कि आपको सिर काटने की क्या आवश्यकता है ? आपको सुन्दर रानियाँ बिना तप के ही मिल जाएँ तो फिर कहीं जाने की जरूरत ही नहीं है । ब्राह्मण देवता चौंके और पूछा – 'बिना तप के ही रानियाँ मिल जाएँ ? आपके कहने का क्या अभिप्राय है ?' रघु बोले – 'आप हमारी रानियों को ले जाइए । कब आप मरेंगे और कब शिवजी को सिर चढ़ायेंगे, दूसरा जन्म मिलेगा तथा वैसी ही सुन्दर लड़कियाँ कब पैदा होंगी, फिर जवान होंगी । भविष्य की कौन जानता है ? आप तो मेरी इन रानियों को अभी ले जाइए ।' ब्राह्मण देव उन रानियों के प्रति आसक्त तो थे ही, इसलिए पूछा – 'क्या आप अपनी रानियाँ दान कर रहे हैं ?' रघुजी बोले – 'हाँ, मैं उनका दान कर रहा हूँ । निःसंकोच भाव से आप उन्हें ले जाइए । आप मेरे महल चलिए । मैं अभी आपको सभी रानियाँ दान में दे देता हूँ ।' महाराज रघु ने महल में जाकर अपनी सभी सुन्दर रानियों को उन ब्राह्मण को दान में दे दिया । इसके बाद रघु ने ब्राह्मण से कहा कि आप क्या खाओगे, जीवन-यापन कैसे करोगे, इसलिए मेरा राज्य कोष भी ले लो । फिर थोड़ी देर बाद रघु बोले कि आप मेरा सिंहासन भी ले लीजिये । ब्राह्मण ने कहा कि आप हँसी तो नहीं कर रहे हैं ? रघु ने कहा – 'नहीं महाराज ! रानियों को दूल्हा चाहिए । इसलिए आप सम्मान से यहाँ विराजिये ।' राजा रघु ब्राह्मण को अपना सर्वस्व दान में दे करके एक वन में जाकर वृक्ष के नीचे बैठ गये । उस समय रात को दो पक्षी आये । मनुष्य का धर्म सदा उसकी रक्षा करता है । धर्मो रक्षति रक्षितः । हमारी आस्था धर्म में पूरी होनी चाहिए और फिर वही धर्म रक्षा करता है । ऐसा नहीं है कि धर्म रक्षा नहीं करता । राजा रघु ने अपना राज्य छोड़ा, रानियाँ छोड़ीं और वन में कौपीन धारण करके पेड़ के नीचे बैठ गये । उसी समय आकाश से दो पक्षी आये और पेड़ पर बैठ गये । उन्होंने एक फल नीचे डाल दिया । पक्षियों ने रघु से कहा – 'महाराज ! इस फल को आप खा लीजिये । इसको खाने के बाद आपको भोजन करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी । आपका शरीर अजर हो जाएगा । कभी वृद्धावस्था नहीं आएगी । आपके शरीर में शक्ति बढ़ती रहेगी ।' वस्तुतः धर्म ही मनुष्य का पोषण करता है । धर्म का पालन करने वाले को किसी से पैसा माँगने की आवश्यकता नहीं पड़ती है । दो वस्तुयें होती हैं । एक तो भोग्य प्रधान और दूसरी भोक्ता प्रधान । हम जैसे साधारण लोग तो भोग्य प्रधान हैं । जहाँ का अन्न है, वहीं खींच ले जायेगा । भोक्ता प्रधान के पास तो अन्न आदि सब स्वयं ही खिंच कर आ जायेगा । रघु जी भोक्ता प्रधान थे, इसीलिए वन में जाने पर भी पक्षियों ने उनके सामने फल डाल दिया और कहा कि

इसको खाने से आपको भूख नहीं लगेगी, आप वृद्ध नहीं होंगे । रघुजी ने फल को रख लिया लेकिन अब भी उनके मन में जरा भी लोभ नहीं उत्पन्न हुआ । त्याग भी अनन्त है । रघुजी को फल को खा लेना चाहिए था क्योंकि दिव्य पक्षियों ने उन्हें दिया था किन्तु वे सोचने लगे कि वह ब्राह्मण तो बूढ़ा है, रानियों को भोगेगा कैसे ? बूढ़े को युवा स्त्री कैसे प्यार करेगी ? मुझे यह फल उसी को दे देना चाहिए । सच्चे क्षत्रिय में शौर्य, तेज, धृति, धैर्य, चतुरता आदि गुण होते हैं । वह युद्ध से भागता नहीं है । वह दान देता है, लेता नहीं है । जिसमें लेने की नीयत है, वह क्षत्रिय नहीं है । क्षत्रिय में ईश्वर भाव होता है, तभी तो उसमें क्षात्र तेज रहेगा । जब हम लेने की नीयत रखते हैं तो क्षात्र तेज नष्ट हो जाता है । रघु अपना क्षात्र धर्म छोड़कर परोपकार के लिए माँगने गये । स्वार्थ के लिए माँगना गलत है । देवराज इन्द्र ने कहा कि मैं ब्रह्माजी की सभा में गया था । वहाँ से फल मुझे मिला था । हमारे देवलोक में भी इस समय वह फल नहीं है । रघुजी ब्रह्माजी के पास गये और उनसे कहा कि महाराज ! मुझे वह फल चाहिए । ब्रह्माजी ने कहा कि वह फल तो मेरे पास भी नहीं है । मैं भगवान् विष्णु के धाम में गया था । वहाँ के बगीचे से मैं उस फल को लाया था । इन्द्र यहाँ आया, उसने मुझे प्रणाम किया तो मैंने वह फल उसको दे दिया था और इन्द्र ने प्रसन्न होकर वह फल पक्षियों को दे दिया । ब्रह्माजी की बात सुनकर रघुजी विष्णु लोक पहुँचे । भगवान् विष्णु ने पूछा – 'महाराज रघु ! यहाँ कैसे आये ?' रघु ने कहा – 'भगवन् ! मैं आपसे वह दिव्य फल माँगने आया हूँ । आपके धाम का वह फल यहाँ से ब्रह्म लोक गया, वहाँ से देव लोक में गया ।' भगवान् विष्णु ने कहा कि वह फल मेरा नहीं है । वह तो आपके ही धर्म या पुण्य के फल का बगीचा है, जितना चाहे तोड़ लो । तुम्हारे धर्म और पुण्यों का बगीचा लगा हुआ है । रघु ने कहा कि फिर तो वह बगीचा ही उस ब्राह्मण को दे दीजिये । एक-दो फल नहीं हजारों फल दे दीजिये । भगवान् हँसने लगे । उन्होंने कहा – 'अच्छा ! सबसे बड़ा फल हमारा धाम है, जो तुमको मिलने वाला है । मैं उस ब्राह्मण को देता हूँ ।' रघु ने कहा – 'दे दीजिये ।'

इस कथा से पता चलता है कि भक्त अपने लिए कुछ भी नहीं चाहता है, भगवद्धाम भी नहीं चाहता है, इतना बड़ा विरक्त वह होता है । रघु के कहने पर भगवान् ने उस ब्राह्मण को वैकुण्ठ में रख दिया तथा रघु को फिर से राजा बना दिया । रघु पृथ्वी पर आये और फिर से राजा बने । ऐसी स्थिति होती है भक्त की, जैसा कि भागवत में कहा गया है –

न नाकपृष्ठं..... ॥ (श्रीभागवतजी ६/११/२५)

भगवान् का भक्त देवलोक का राज्य भी नहीं चाहता है । हमारे जैसे आजकल के वक्ता भाषण तो ऐसा देते हैं किन्तु यदि कोई सामने दस रुपये का नोट रख देता है तो उसी को देखकर प्रसन्न हो जाते हैं । देवलोक का राज्य तो कहाँ से छोड़ेंगे ? भक्त के मन की ऐसी स्थिति होती है कि उसके मन में क्षोभ नहीं होता है । भक्त को सार्वभौम – पृथ्वी का राज्य दे दो, वह उसकी ओर देखेगा भी नहीं । ब्रह्माजी का पद दे दो, उसकी ओर भी नहीं देखेगा । रसातल का राज्य दे दिया जाए तो उसकी ओर भी नहीं देखेगा । योग की सिद्धियों की ओर नहीं देखेगा, मोक्ष को नहीं देखेगा । इसको भक्त कहते हैं । जिसको दस रुपये पाकर प्रसन्नता हो गयी, मन में क्षोभ हो गया, वह भक्त कैसे हो जाएगा ? ये सब दशायें होती हैं लेकिन साधारण जीवों में नहीं होती हैं । जिनके भीतर शुद्ध सत्त्व की कृपा हो गयी हो, उनके भीतर भावोदय, प्रेमोदय होता है । उनके भीतर क्षमता होती है । उस प्रेम की दशा जब तक नहीं है, उस प्रेम को देने वाली राधारानी ही हैं । मनुष्य को उनकी ही आराधना करनी चाहिए, उनसे ही प्रेम माँगना चाहिए और कोई दूसरा रास्ता नहीं है ।

गौ–सेवकों की जिज्ञासा पर माताजी गौशाला का

Account number दिया जा रहा है –

SHRI MATAJI GAUSHALA, GAHVARVAN,BARSANA, MATHURA

Bank – Axis Bank Ltd , A/C – 915010000494364

IFSC – UTIB0001058 BRANCH – KOSI KALAN, MOB. NO. –9927916699

भारत माँ का गौरव 'गौमाता'

गायों की खिरक को ही 'ब्रज' कहा गया है, गौवंश की सेवा के कारण ही 'ब्रज' प्रेम-माधुर्य की भूमि है क्योंकि शुद्ध सत्त्वमय वातावरण गायों से ही होता है; इसीलिये ब्रजभूमि के कण-कण में प्रेम समाया हुआ है । 'ब्रज' का एक नाम गोकुल भी है इस गोकुल ने ही कन्हैया को गोपाल बनाया, गोविन्द बनाया । गौ चर्चा ही ब्रज चर्चा का पूरक है अतएव इसकी अतिशयावश्यक चर्चा यहाँ की जा रही है ।

'यत्र गावो भूरिश्रृंगाः अयासः' (ऋग्वेद.१/१५) जहाँ गाय हैं, वहीं ब्रज है ।

'व्रजन्ति गावो यस्मिन् स व्रजः ।' भूमि के सप्त आधार स्तम्भों में से प्रथम स्तम्भ है – **गौ माता ।**

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभि: सत्यवादिभि: । अलुब्धैर्दानशीलैश्च सप्तभिर्धार्यते मही ॥ (स्कन्दपुराण ४/२/९०)

इस भूमि की आधार है – श्रीगौमाता । जानते हो, इस आधार पर प्रथम प्रहार किया था कलियुग ने गौवंश पर । उस कलियुग का दमन तो कर दिया श्रीपरीक्षितजी ने किन्तु अब कलियुग के अनेकों बाप-दादा आ गए हैं । जो इस आधार स्तम्भ को विदीर्ण करने के लिए निर्ममता से अघ्न्या (अवध्या) गौ का वंदन के स्थान पर हनन कर रहे हैं ।

श्रीकृष्ण के अवतार से न केवल भारत की प्रत्युत सम्पूर्ण विश्व की रक्षा हुई थी । गोपियाँ कहती हैं –

व्रजवनौकसां व्यक्तिरङ्ग ते वृजिनहन्त्र्यलं विश्वमङ्गलम् ।
त्यज मनाक् च नस्त्वत्स्पृहात्मनां स्वजनहृद्रुजां यन्निषूदनम् ॥ (श्रीभागवतजी १०/३१/१८)

कृष्ण ! तुम्हारे आने से विश्व मंगल हुआ । कैसे? तुमने गौ सेवा की । गोपालक ही गोपाल का बालक है । सम्पूर्ण संसार जानता है कि गवामृत से शुद्ध-बुद्धि, पवित्र-चरित्र का निर्माण होता है । बुद्धि यदि शुद्ध है तो राग-द्वेष, कलह-विषाद स्वतः संसार से नष्ट हो जाए, प्रेम का संचार हो जाए । यदि आज अनाद्या अवध्या गौ का वध बंद हो जाए तो भारतवर्ष सशक्त व स्वराट् बन जाए । गो-गोपाल के सेवक का कदापि कोई अभद्र नहीं हो सकता है । किसने नहीं की गौ सेवा?

विधि-हरि-हर ने स्वयं गौ-स्तवन किया । महदपराध होने पर ऋषियों से शप्त होकर शिवजी ने गोलोक जाकर सुरभि का स्तवन किया । सुरभि ने स्नेह पूर्वक शिवजी को गर्भस्थ कर लिया । देवगणों ने ढूँढते हुए गोलोक में स्थित सुरभि से प्रार्थना की, तब सुरभि ने एक वत्स को जन्म दिया जो नीलवृषभ बोले गए । यही पंचानन थे । श्रीराम जी के जन्म के पूर्व महाराज दशरथ जी ने दस लाख गायों का दान किया । **'गवां शत सहस्राणि दश तेभ्यो ददौ नृप'** (श्रीवाल्मीकि रामायण १/१४/५०)

इस गौदान से अग्निदेव यज्ञ में प्रसाद लेकर प्रकट हुए । राम जन्मावतार के बाद पुन: महाराज दशरथ जी ने बहुसंख्यक गौदान किया । **'हाटक धेनु बसन मनि नृप बिप्रन्ह कहँ दीन्ह ।'** (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड - १९३)

पुन: विवाहावसर पर चार लाख गायों का दान किया ।**'गवां शतसहस्राणि चत्वारि पुरुषर्षभ:'** (श्रीवाल्मीकि रामायण १/७२/२३)

चारि लच्छ बर धेनु मगाईं । काम सुरभि सम सील सुहाईं ॥ (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – ३३१)

फिर वनयात्रा काल में भी गौदान किया ।**'बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार'** (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – १९२)

गौ-रक्षक रामभक्त है, गौ-नाशक रावण का वंशज है क्योंकि रावण का आदेश था –

जेहिं जेहिं देस धेनु द्विज पावहिं । नगर गाउँ पुर आगि लगावहिं ॥ (श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – १८३)

राज्याभिषेक के अवसर पर राम जी ने एक लाख पयस्विनी गायों का दान किया । मानस जी में मिलता है राम जी ने करोड़ों अश्वमेघ यज्ञ किए । **'कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्हे'** (श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड – २४)

वे यज्ञ बिना गवामृत के नहीं होते थे । 'गौ' यज्ञ का मूल है । अत: श्री राम जी की राजकीय गौशालाओं में असंख्य गायों की सेवा होती थी और तब वे मनोवांछित दुग्ध देती थीं । 'मनभावतो धेनु पय स्रवहीं' (श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड – २३)

यह तो रामजी की गौभक्ति थी और गोपाल की गौभक्ति तो वाणी का विषय ही नहीं बन पाती । जब चलना सीखा तो सर्वप्रथम वत्स आश्रय ही लिया – **यर्ह्यङ्गनादर्शनीयकुमारलीला वन्तरव्रजे तदबलाः प्रगृहीतपुच्छैः ।**

वत्सैरितस्तत उभावनुकृष्यमाणौ प्रेक्षन्त्य उज्झितगृहा जहृषुर्हसन्त्यः ॥ (श्रीभागवतजी १०/८/२४)

वत्स पुच्छ पकडकर इस बालक ने खड़ा होना सीखा । गोबर का उबटन लगाते एवं गौमूत्र से स्नान करते । शेष इच्छा गौचारण में पूरी हो जाती, जिस समय सघन केशराशि गौधूलि से भर जाती । गोपियों ने कहा है – **उत्सवं श्रमरुचापि दृशीनामुन्नयन् खुररजश्छुरितस्त्रक् । दित्सयैति सुहृदाशिष एष देवकीजठरभूरुडुराजः ॥** (श्रीभागवतजी १०/३५/२३)
अभी दूध के दाँत भी नहीं गिरे और वत्सचारण की हठ कर बैठे । नन्दद्म्पत्ति ने विचार किया –
यदि गोपसङ्गावस्थानं बिना न स्थातुं पारय तस्तर्हि व्रजसदेशदेशे वत्सानेव तावत्सञ्चारयतामिति । (गोपाल चम्पू १०/११)
बड़े चंचल हैं ये दोनों । गौ दर्शन के बिना रह नहीं सकते । **'आगे गाय पाछे गाय इत गाय उत गाय । गोविन्द को गायन में बसवो ही भावे ॥'** (श्रीछीतस्वामीजी) चलो वत्स चारण का तिलक तो कर ही दें । पाँचवा वर्ष पूरा होते-होते तो ये गौचारण के लिए मचल बैठे । श्रीशुकदेवजी कहते हैं - **ततश्च पौगण्डवयःश्रितौ व्रजे बभूवतुस्तौ पशुपालसम्मतौ ।**
गाश्चारयन्तौ सखिभिः समं पदै र्वृन्दावनं पुण्यमतीव चक्रतुः ॥ (श्रीभागवतजी १०/१५/१)
कार्तिक शुक्ल अष्टमी को यह स्वीकृति भी मिल गई मैया-बाबा से फिर एक दिन गौदोहन की हठ भी कर बैठे ।
गोपालानं स्वधर्म्मो नस्तास्तु निश्छत्र-पादुकाः । यथा गावस्तथा गोपास्तर्हि धर्म्मः सुनिर्म्मलः ॥
धर्म्मादायुर्यशोवृद्धिर्धर्म्मो रक्षति रक्षितः । स कथं त्यज्यते मातर्भीषुधर्म्मः सुनिर्म्मलः ॥ (गोविन्द लीलामृत.५/२८,२९)
उपरोक्त में उल्लिखित है कि गौचारण काल में कभी पन्हैया भी नहीं पहनी । गोपालजी की गौभक्ति परमाद्भुत है, जिन्होंने गौसेवा के लिए ही अपनी भगवत्ता छोड़ दी और ब्रजभूमि में एक साधारण ग्वारिया बनकर ग्वालवालों के साथ गौचारण किया । श्रीराम-कृष्ण ने जिनकी वंदना की उस गौमाता की सेवा ही सच्ची राष्ट्र सेवा व सच्ची भगवदाराधना है ।
यह भगवद् संपदा (गौ) पृथ्वी के लिए वर व भारतीय संस्कृति का मेरुदण्ड है । ऐहिक हो अथवा आमुष्मिक, श्रेय सिद्धि कारक है गौसेवा । श्री वशिष्ठ जी की गौसेवा बड़ी ख्यात है, इनको गौ तत्ववेत्ताओं का आद्याचार्य कहा । महाभारत में राजा सौदास को आपने गौसेवा धर्म का उपदेश दिया.....गौओं का नाम कीर्तन किए बिना न सोए और उनका स्मरण करके ही प्रातः उठे । **नाकीर्तयित्वा गाः सुप्यात् तासां संस्मृत्य चोत्पतेत् ।**
सायंप्रातर्नमस्येच्च गास्ततः पुष्टिमाप्नुयात् ॥ (महाभारत, अनुशासनपर्व - ७८/१६)
गाश्च संकीर्तयेन्नित्यं नावमन्यते तास्तथा । अनिष्टं स्वप्नमालक्ष्य गां नरः सम्प्रकीर्तयेत् ॥ (महाभारत, अनुशासनपर्व - ७८/१८)
जिन श्रीवेदव्यासजी का उच्छिष्ट है सम्पूर्ण वैदिक साहित्य ''व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वम्'' आपने भी अपने समग्र साहित्य में गौसेवा को ही प्रमुख माना, चाहे वह स्कन्द पुराण हो, भविष्य पुराण हो, पद्म पुराण हो, अग्नि पुराण अथवा महाभारत हो सर्वत्र गौ-गरिमा का ही वर्णन है । च्यवन ऋषि ने तो राजा द्वारा एक गाय दिए जाने पर कहा – "महाराज ! आपने मुझे खरीद लिया ।" महाराज ऋतम्भर ने अपूर्व गौसेवा की, जाबाल पुत्र सत्यकाम को गौसेवा से ही ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हुई, महाराज दिलीप ने गौभक्ति से रघु जैसे परम यशस्वी पुत्र को प्राप्त किया, जिससे वंश का नाम ही रघु वंश हो गया, नामदेव ने मृत गाय को जीवित किया । कैसा विलक्षण था उनका गौ-प्रेम । कलिकाल में भी वीर बालक शिवाजी तो शैशव से ही गौभक्त थे । गौ पर होने वाले अत्याचार को नहीं देख सकते थे । गौप्राणरक्षणार्थ अनेकों बार अकेले कसाईयों से भिड गए । गौवधिकों का वध भी कर डाला । समस्त समस्याओं का निदान - गौ सेवा से सहज ही हो जाता है । आर्थिक समृद्धि का मुख्य स्रोत है – गाय । देश की लगभग ८०% जनता कृषि जीवी है, वह कृषि पूर्णरूपेण गौ पर अवलंबित है । गोमय से बढ़ती है पृथ्वी की उर्वरा शक्ति । गोबर की खाद से उत्पन्न अन्न से न केवल शरीर अपितु मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ भी शुद्ध, स्वच्छ व शक्तिसंपन्न होती हैं । **"अन्नशुद्धौ सत्वशुद्धि, सत्वशुद्धौ ध्रुवास्मृति.... "**
आज भी गौवंश की उपेक्षा न करके उसी से कृषि कार्य सम्पादित हो तो न गौवध हो, न जनवध । आज की मँहगाई ने जनवध कर दिया । डीजल, पेट्रोल की आए दिन मँहगाई वृद्धिरत है, क्या आवश्यकता है डीजल, पेट्रोल की ? गोबर गैस से सब कार्य क्यों न किये जायें ? गोबर गैस से चलित वाहन आज तेजी से हो रहे वायु प्रदूषण पर भी रोक लगायेगा ।

परसा कीड़ा नीम का चाखा चाहे खांड । तन राखे सत्संग में मन में राखे रांड ॥

विशुद्ध भाव से हमें गौसेवा करनी चाहिए । इसके निमित्त प्राप्त धन का दुरूपयोग हमें नारकीयता में ले जायेगा । गाय जब अपने दूध से अपना स्वार्थ नहीं रखती तो हम गौ सेवा के धन से अपनी स्वार्थ पूर्ति करें यह उचित नहीं ।

"गावो विश्वस्य मातरः" गाय किसी व्यक्ति विशेष की नहीं सम्पूर्ण विश्व की माँ है अतः सम्पूर्ण राष्ट्र का परम धर्म है गौ वध निवारण व गौ सेवा । कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र के २/२६ में गौरक्षा पर राजा को पूर्ण रूपेण ध्यान देने का निर्देश किया है । अशोक के शिला लेखों में गौहत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध द्रष्टव्य है ।

बदाउनी ने लिखा है कि हिन्दुओं तथा जैनियों के प्रभाव से अकबर के राज्य में कोई भी गौ वध नहीं कर सकता था । बी.ए. स्मिथ ने अपने इतिहास प्र.-१०१ पर जहाँगीर के विषय में यहाँ तक लिखा है कि वह जान या अनजान में भी गौहत्यारों को फांसी पर लटकाने में नहीं हिचकता था । महात्मा गाँधी, स्वामी करपात्री जी, प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी, हनुमान प्रसाद पोद्दार जी (भाई जी) ने भी प्रयास किया भारत में पूर्णतः गौवध बन्द कराने का किन्तु यह देश का दुर्भाग्य है जो अंधे शासक अपने लाभ को न देख पाने के कारण विनाश की ओर बढ़ रहे हैं गौरक्षक के नाम पर गौभक्षक बन रहे हैं । ऐसी स्थति में पवित्राचार, श्री, ऐश्वर्य एवं शांति स्थापन देश में कदापि सम्भव नहीं है । जब तक भारत में गाय का आदर था, दूध-दही की नदियाँ बहती थीं, देश में शांति थी, देवता भी यहाँ जन्म लेने को लालायित रहते थे । स्वर्ग की सर्वश्रेष्ठ अप्सरा उर्वशी तो केवल घृत पान करने के लिए पुरुरवा के साथ भारत में बहुत दिनों तक रही । राजा मरुत के यज्ञ में देवगण स्वयं परिवेषण कार्य करते थे, विश्वेदेव सदा सभासद बनकर रहते । गौ सेवक गोविन्द का सर्वाधिक प्रिय बन जाता है यह तो निश्चित है ही ।

१०वीं शताब्दी तक भारत वर्ष गौवंश के लिए स्वर्ग की भाँति था । १८ वी शताब्दी से कानून कुछ बदलने लग गए । १९वी शताब्दी में माँस भक्षण को स्थायित्व दे दिया विज्ञान ने । इसके लिए गौवध उत्तरोत्तर बढ़ने ही लगा । १९०५ में गौरक्षा का प्रश्न उठा तो यही कहा गया कि अंग्रेज मांसभक्षी हैं, इन्हें जल्द से जल्द देश से निष्कासित किया जाए । उस समय गाँधी जी ने यहाँ तक कहा – हम स्वतंत्रता के लिए कुछ समय प्रतीक्षा भी कर सकते हैं किन्तु गौहत्या होना हमें एक दिन भी सहन नहीं होगा । आज भारत स्वतन्त्र हो गया किन्तु गौवध बन्द न हुआ । जब भारतीय ही गौवध करेंगे तो इस पर रोकथाम लगाने के लिए इटैलियन या अमरीकी नहीं आयेंगे । भारत सोने की चिड़िया था एवं पुनः पूर्ववत हो सकता है क्योंकि भारत जैसी सोना उगलने वाली भूमि अन्यत्र नहीं है । "गावो विश्वस्य मातरः" वेदों में गाय को सारे संसार की माता कहा गया । ऐसा क्यों कहा गया? क्योंकि हर व्यक्ति की माँ अलग-अलग होती है सभी की जन्मदात्री सभी योनियों में अलग-अलग होती है और वह अपने दूध से अपने शिशु का पोषण करती है । जन्मदात्री को जननी कहा गया वह जननी जन्मदात्री होते हुए भी केवल थोड़े दिन ही अपने दूध से शिशु का पोषण करती है कुछ दिन बाद उसका दूध सूख जाता है और प्राणी मात्र के पोषण के लिए गौ माता का आश्रय करना पड़ता है । जिसका दूध कभी नहीं सूखता है । मनुष्य जीवन की अंतिम श्वास तक गौ माता के दूध से पोषण होता है । जन्म देने वाली माँ सदा पोषण नहीं कर सकती है केवल अपने से उत्पन्न शिशु का पालन थोड़े दिन कर सकती है किन्तु गौ माता संसार के सभी प्राणियों का पोषण करती है । अपनी माता बच्चे से सेवा का भी स्वार्थ रखती है जबकि गौमाता निःस्वार्थ भाव से दूध दान करती है । ऐसी संसार की जननी गौ माता को मारना अपनी सैकड़ों जननियों से ज्यादा घृणित है मातृभक्ति की दृष्टि से ही नहीं कृतज्ञता की दृष्टि से भी गौ हत्या करना पाप है । अपनी माँ (जन्मदात्री) का मल-मूत्र कभी पूज्य नहीं हो सकता और वह मल रोग कारक और विषाक्त होता है । उसमें घातक रोगाणुओं की भरमार रहती है किन्तु गौमाता का गोबर मल नहीं वरन श्रेष्ठ है निर्दूषज है रोग नाशक है किसी को खुजली हुई हो गोबर में गोमूत्र मिलाकर लेप कर धूप में बैठ जाओ, सभी खुजली रोग के बैक्टीरिया नष्ट हो जायेंगे । अनुपान के साथ सेवन किया जाए तो विश्व के सभी रोगों पर गौबर-गौमूत्र से उपचार हो सकता है । गोबर से बनी खाद से पृथ्वी की उर्वरा शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि प्राचीन भारत को सोने की चिड़िया इसलिए

कबीर सोता क्या करे जागि न जपै मुरारि । एक दिना है सोवना लंबे पाँव पसारि ॥

कहा जाता था । भारत सोने की चिड़िया था एवं पुनः पूर्ववत् हो सकता है क्योंकि भारत जैसी सोना उगलने वाली अवनि अन्यत्र नहीं हैं । भारत वर्ष में आज भी इतनी शक्ति है कि अकेला भारत वर्ष समग्र विश्व को शुद्ध अन्न दे सकता है । विश्व की जनसंख्या ६०० करोड़ है ।१ वर्ष के लिए सारे विश्व को अनाज = ६०० करोड़ कुन्तल । भारत में, १ हेक्टेयर भूमि में ६० कुन्तल अनाज पैदा होता है । भारत की १९ करोड़ हेक्टेयर भूमि में ११४० करोड़ कुन्तल अनाज पैदा हो सकता है । सारे विश्व को ६०० करोड़ कुन्तल अनाज खिला देने के बाद भी भारत के पास ५४० करोड़ कुन्तल शेष बच जाता है । अब तो ये क़त्लखाने बढ़कर न जाने कितने हो गए हैं, वर्तमान के आंकड़े नहीं लिखे गये किन्तु ये दिन प्रतिदिन बढ़ रहे हैं । इस अवसर पर भारत को जाग्रत करने के लिए ये सांकेतिक चेतावनी है । यहाँ किसी की आलोचना का दृष्टिकोण लेखक का नहीं है । भारत वर्ष में गौ भक्त व भगवद् भक्त हैं ही नहीं, ऐसा नहीं है । भारतीय सनातन संस्कृति में महापुरुष सदा रहे हैं तभी धर्म की ध्वजा आज तक फहरा रही है । पृथ्वी धरातल पर स्थित है फिर भी समग्र राष्ट्र को गौ भक्ति व भगवद् भक्ति में संलग्न न देखकर हृदय दुःख से द्रवित होता है । इस लेख में गौभक्ति, समाज–संसार के कल्याण की भावना रखी गयी है ।

आज लगभग सत्तर हजार से अधिक गायों का मातृवत् पोषण कर रहे पूज्य गुरुदेव श्रीबाबामहाराज का कथन है कि वस्तुतः गाय का पोषण हम नहीं कर रहे वरन् हम स्वयं गाय द्वारा पोषित हो रहे हैं । गौमाता के उपकारों को देखा जाय तो सच में वे अनन्त हैं । गौमाता व गौमूत्र का महत्त्व जान लिया जाय तो केवल गाय ही नहीं बछड़े-बैल जो उपेक्षित हैं, सम्पूर्ण गौवंश इस उपेक्षा से बच जाय । बैल से चलित जनरेटर से विद्युत् शक्ति का घर-घर में उपयोग होगा, उपेक्षा से बचेगा गौवंश । इस उपयोग से विद्युत् शक्ति तो बचेगी ही देश की आर्थिक व्यवस्था में भी डीजल का भार कम हो जाएगा । गौवंश का आधा भाग जिसका उपयोग कुछ नहीं है, उसे लोग कटने भेज देते हैं । बछड़े के जन्म से हिन्दू दुःखी हो जाता है । आज 'श्रीमानमंदिर' की 'श्रीमाताजी गौशाला' में लूली-लंगड़ी, असहाय गौवंश का न केवल पोषण प्रत्युत अखण्ड हरिनाम संकीर्तन द्वारा पूजन-आराधन भी हो रहा है । सौभाग्य से 'श्रीमाताजी गौशाला' उसी स्थान पर है जहाँ श्रीवृषभानुजीमहाराज की गायें बँधती थीं । परम पूज्य श्रीबाबामहाराज की नित्य होने वाली निष्काम 'आराधना-शक्ति' से आज 'श्रीवृषभानुबाबा के द्वापरकालीन वैभव का स्वरूप' साक्षात् प्रकट हो रहा है, श्रीजी के कृपापात्रजनों को इसकी प्रत्यक्ष अनुभूति हो रही है; इसके एक आदर्श उदाहरण हैं – परम विरक्त 'श्रीब्रजशरणजीमहाराज' जो श्रीमाताजी गौशाला के प्रधान गौसेवी संत हैं ।

वृन्दावन में बसत ही एतो बड़ो सयान । जुगल चन्द्र के भजन बिन निमिष न दीजे जान ॥

श्री मानमंदिर

प्रस्तावित पुनरुद्धार रेखांकित चित्र

मान मंदिर लीला स्थल श्रीराधाकृष्ण की लीला स्थलियों में सबसे प्रमुख है
इस अति विलक्षण लीला स्थली के पुरुद्धार कार्य में जुड़ कर धाम सेवा का दुर्लभ लाभ प्राप्त करें

सेवा राशि देकर रसीद अवश्य प्राप्त करें।

ACCOUNT NUMBER: **59109927338666**
IFSC CODE: **HDFC0000268**
BANK: **HDFC BANK LTD**
BRANCH: **BSA COLLEGE, MATHURA**
संपर्क :9927338666
www.maanmandir.org

आपकी सेवा राशि आयकर अधिनियम 80G/12A के अंतर्गत आयकर छूट के लिए मान्य है
रजिस्ट्रेशन नंबर AADTS716DEF2021401

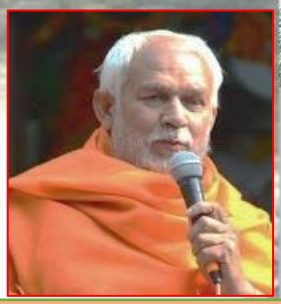

कार्यकारी अध्यक्ष -
राधाकान्त शास्त्री
मोबा. - 9927338666

ACCOUNT NAME
SHRI MAAN BIHARI
LAL MANDIR SEVA
ACCOUNT NUMBER: 59109927338666
IFSC CODE: HDFC0000268
BANK: HDFC BANK LTD
BRANCH: BSA COLLEGE, MATHURA

मान मंदिर लीला स्थल श्रीराधाकृष्ण की लीला स्थलियों में सबसे प्रमुख है
इस अति विलक्षण लीला स्थली के पुरुद्धार कार्य में जुड़ कर धाम सेवा का दुर्लभ लाभ प्राप्त करें

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट, गह्वरवन, बरसाना (मथुरा)
www.maanmandir.org; संपर्क :9927338666

QR कोड

गोधन गजधन बाजि धन और रतन धन खान । जब आवै संतोष धन सब धन धूरि समान ॥

परम पूज्यश्री बाबा महाराजजी के ७८ वें जन्मोत्सव पर बाबाश्री के सानिध्य में बरसाना धाम की परिक्रमा लगाई गई

परम पूज्यश्री बाबा महाराजजी के ७८ वें जन्मोत्सव पर श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं का मंचन मानमन्दिर की साध्वियों द्वारा किया गया

RNI REFERENCE NO. 1313397- REGISTRATION NO. UP BIL-2017/72945-TITLE CODE UP BIL-04953 POSTAL REGD.NO. 093/2024-2026 श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा 'गुप्ता प्रिन्टिंग प्रेस, खरौट गेट, कोसीकलाँ, मथुरा. उत्तरप्रदेश' से मुद्रित एवं मान मन्दिर सेवा संस्थान, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित [AGRA/WPP-12/2024-2026 AT 31.12.26]